आर्य्य-संघ पुस्तक-माला का तृतीय-पुष्प





आकाश तत्त्व-बोध

* ओ३म् *

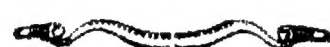
आकाश-तत्त्व-बोध



लेखक—

प्रो० शङ्करलाल एम्. ए. एल. एल. बी.

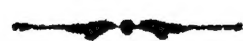
वकील हाईकोर्ट



प्रकाशक—

पं० शिवदयालु मन्त्री

आर्य्य-संघ, मेरठ सदर



विक्रम संवत् १९८२

सन् १९२६ ई०

प्रथम वार १०००] [मूल्य ॥ आठ आने

Printed by L. Girdhari Lall Consil

at the Sahitya Press, Meerut.

मुद्रक—
साहित्य मुद्रणालय
मेरठ।



प्रकाशक—
शिवदयालु
आर्य्य-संघ
मेरठ सदर (यू० पी०)

भूमिका

शिक्षा-विभाग से बहुत समय तक सम्बन्ध रहने के कारण विद्यार्थियों की—प्राय: उन विद्यार्थियों की जो अङ्गरेज़ी स्कूलों व कालिजों में शिक्षा प्राप्त करते हैं-विचार-धारा तथा मानसिक-दशा से विशेषतया परिचित होने का अवसर मिलने से यह ज्ञात हुआ कि ज्योतिष सम्बन्धी उन का ज्ञान बहुत न्यून है। राशि नक्षत्रादि का तो कहना ही क्या तिथि अर्थात् हिन्दी-तारीख़ों तक से अधिकतर वह अनभिज्ञ पाए गये। प्राय: देखने में आता है कि जो मनुष्य किसी विषय में अनभिज्ञ होते हैं समय पड़ने पर उस विषय की सत्यता से ही इन्कार कर देते हैं। कम से कम उसको मिथ्या मानने लगते हैं तिथियों के सम्बन्ध में विद्यार्थियों की भी यह ही दशा पाई गई। बहुधा उपहास करने के भाव से ऐसा कहते हुए सुने गये कि एक दिन में दो तिथियां कैसे हो सकती हैं और तिथियां क्यों घट बढ़ जाती हैं? इन लोगों को केवल अङ्गरेज़ी तारीख़ों का ज्ञान होता है। इन बेचारों को क्या मालूम कि तिथि कहते किस को हैं और इसका सम्बन्ध चान्द की गति से है अथवा सूर्य की गति से। इन लोगों को केवल व्यवहारिक-वर्ष (Civil Year) का ज्ञान होता है ज्योतिष-वर्ष का ज्ञान किसी २ को ही होता है। इनकी इच्छा तो यह ही है कि तिथि भी २४ घण्टों की होनी चाहिये। बहुत से ऐसे भी पाए गए जिनको 'लौंद-मास' के नाम पर ही हंसी आती है किन्तु फ़रवरी मास २६ दिन का होना इनके लिये आश्चर्य-जनक नहीं।

'क्षय-मास' का नाम सुन कर तो इन के कान खड़े हो जाते हैं। विद्यार्थियों बेचारों का तो कहना ही क्या? बहुत से फलित-ज्योतिष वाले चकित हो जाते हैं। और यह नहीं बतला सकते कि 'क्षय-मास' कैसे और कब हो सकता है? अनुभव से यह कहा जा सकता है कि हमारे इस भारतवर्ष में अधिक से अधिक अङ्गरेज़ी पढ़े हुओं में १० प्रतिशत को हिन्दी महीनों और सम्वत् का ज्ञान होगा।

इन से अधिक शोचनीय दशा उन अशिक्षित लोगों की है जो अविद्या के कारण ग्रहण-सम्बन्धी अनोखी २ कल्पनायें करते हैं और विचित्र कथा और कहानियों में विश्वास करके अन्ध-विश्वासी कहलाते हैं। ऐसा होना ही चाहिये जब कि बहुत से फलित-ज्योतिष जानने और मानने वालों को यह मालूम न हो कि 'राहु' और 'केतु' क्या वस्तु हैं? जलचर हैं वा बनचर, स्थूल शरीर वाले हैं वा सूक्ष्म शरीरधारी और इनका प्रभाव मनुष्य के जीवन पर कैसे हो सकता है? इस का कारण यह ही मालूम होता है कि फलित-ज्योतिष भी ऐसा ही प्राचीन है जैसा कि गणित-ज्योतिष शास्त्र।

उपरोक्त बातों को विचार कर ऐसी इच्छा उत्पन्न हुई कि यदि किसी प्रकार से भारतवर्ष से यह अन्ध-विश्वास उठ जाये कम से कम अन्ध-विश्वासियों की संख्या कम हो जाय तो यह अपना प्रयत्न निष्फल न होगा।

सौभाग्य से उन्हीं दिनों मेरे पुत्र शादीराम ने जो S.L.C. पास कर चुका है ज्योतिष-सम्बन्धी भिन्न २ प्रकार के प्रश्न करने आरम्भ कर दिये और समय २ पर मैं अपनी बुद्धि अनुसार उसके प्रश्नों का उत्तर देता रहा। मेरे पुत्र ने इन प्रश्नों को एकत्रित कर लिया और प्रकाशित कराने की इच्छा

प्रकट की जिससे साधारण जनता और विशेषकर भ्रातृ-मण्डल लाभ उठावे। इस इच्छा को उचित मान वह प्रश्नोत्तर क्रम-बद्ध कर दिये गये। और ऐसा विचार होने पर कि उनके प्रकाशित होने से किसी प्रकार हानि तो होगी ही नहीं, अपितु अपने देश भाइयों को लाभ ही होगा और भारतवर्ष के माथे जो कलङ्क-कालिमा लगाई गई है उसका भी निराकरण होगा, प्रश्नोत्तर प्रकाशित किये गये। अतएव आशा की जाती है कि भारत निवासी इस पुस्तक को प्रेम से पढ़ेंगे और जो कुछ त्रुटि उस में पाई जाय उस की सुहृद्भाव से सूचना देने की कृपा करेंगे जिस से दूसरे संस्करण में संशोधन कर दिया जावे।

प्रस्तुत पुस्तक का अभिप्राय गणित-ज्योतिष सम्बन्धी मोटी २ बातों को प्रकट करना है। यदि इस छोटीसी पुस्तक को जनता ने अपनाया तो यथाऽवकाश गणित, फलित तथा ज्योतिष-शास्त्र के इतिहास पर प्रकाश डाला जायगा।

इस पुस्तक के मुद्रण में पं० गयाप्रसाद जी वाजपेयी से विशेष सहायता मिली है एतदर्थ वाजपेयी जी को धन्यवाद।

कार्तिक पूर्णिमा
सं० १९८२ वि०

शङ्करलाल

विषय-सूची

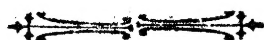
(*) हिन्दुओं ने अर्थात् फलित ज्योतिष वालों ने जो नव-ग्रह माने हैं उनमें यूरेनस (Uranus) और नैपच्यून (Neptune) की जगह राहु और केतु शामिल किये हैं। राहु और केतु वास्तव में कोई ग्रह नहीं हैं। वह तो चन्द्रमा के दो नोड्स (Nodes) हैं क्योंकि गणित ज्योतिष नोड्स (Nodes) को और फलित ज्योतिष राहु और केतु को वक्र-गति वाले बतलाते हैं।

पृष्ठ ७ पंक्ति २६

अशुद्ध	शुद्ध
प्रति सेकण्ड है।	सेकण्ड प्रति दिन है।

* ओ३म् *

आकाश तत्त्वबोध



प्रश्न—गृहण कैसे होता है ?

उत्तर—किसी ज्योतिर्मान (रोशन) वस्तु के छिप जाने को ग्रहण कहते हैं। ज्योतिष की भाषा में किसी प्रकाश वाली ग्रह का अल्प समय के लिये ओझल हो जाना ग्रहण कहलाता है। सूर्य्य-मण्डल में, सूर्य्य मुख्य अर्थात् ग्रहों का केन्द्र है और अन्य सब ग्रह आकर्षण शक्ति द्वारा उसके चहुं ओर घूमते रहते हैं। जब कभी चन्द्रमा, पृथ्वी तथा किसी अन्य एक ग्रह के मध्य में आकर उस ग्रह के प्रकाश को रोक देता है अर्थात् पृथिवी पर रहने वालों की दृष्टि से उस ग्रह को ओझल कर देता है तो उस ग्रह का ग्रहण कहलाता है। चन्द्रमा और सब ग्रहों से छोटा है और पृथिवी के चारों ओर घूमता रहता है। और पृथिवी भी और ग्रहों की तरह सूर्य्य के चारों ओर घूमती रहती है। समय २ पर चन्द्रमा मध्य में आकर किसी ग्रह के प्रकाश को पृथिवी तक आने से रोकेगा और ग्रह के प्रकाश के रुकने का नाम ही ग्रहण है।

प्रश्न—सूर्य्य-ग्रहण और चन्द्र-ग्रहण तो देखने और सुनने में आते हैं किन्तु ऊपर के उत्तर से विदित होता है कि और ग्रहों के भी ग्रहण होते हैं। क्या वास्तव में ऐसा ही है ? और यदि है तो देखने और सुनने में क्यों नहीं आता ? इस हिसाब से तो तारों के भी ग्रहण होते होंगे।

उत्तर—ग्रहण तो सब ग्रहों का होता है परन्तु देखने में इस लिये नहीं आता कि चन्द्रमा की अपेक्षा और ग्रह पृथिवी से बहुत दूर हैं यहां तक कि बिना दुर्बीन की सहायता के हम को दिखलाई नहीं देते। गणित ज्योतिष के जानने वालों ने इन ग्रहों को दुर्बीन द्वारा देखा है इस लिये बहुत सम्भव है कि उन्होंने ग्रहण भी देखे हों। जब दुर्बीन की सहायता रहित आंखों से हम एक ग्रह को ही नहीं देख सकते तो उसके ग्रहण को कैसे देख सकते हैं। यदि किसी ज्योतिष जानने वाले की सहायता से दुर्बीन द्वारा देखो तो प्रत्येक ग्रह और उसका ग्रहण तुमको भी दीख सकता है। और सुनने में तो यों नहीं आते कि गणित ज्योतिष के विद्वानों से इस विषय में वार्त्तालाप बहुत कम होती है और जो विचारे स्वयं ही नहीं जानते वह हमको क्या बतला सकते हैं? क्योंकि नेत्रहीन किसी दूसरे को कभी रास्ता नहीं बतला सकता। ग्रहों की तरह तारों के भी ग्रहण होते हैं। किन्तु ज्योतिष भाषा में तारे के ओझल होने को इक्लिप्स (Eclipse) नहीं कहते किन्तु आकल्टेशन (Occultation) कहते हैं।

प्रश्न—जब आप यह मानते हैं कि दूर होने से अन्य ग्रहों के ग्रहण हमें दिखलाई नहीं देते तो सूर्य्य का ग्रहण क्यों दिखलाई देता है और बुद्ध(Mercury) और शुक्र (Venus) का क्यों नहीं दिखलाई देता जब कि यह दोनों ग्रह सूर्य्य की अपेक्षा पृथिवी से अधिक निकट हैं।

उत्तर—इसका कारण दूसरा है। वह यह कि सूर्य्य स्वयं प्रकाशमान है और अन्य ग्रह स्वयं प्रकाशमान नहीं है किन्तु चन्द्रमा की तरह उनका भी प्रकाश मंगा हुआ होता है अर्थात् सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होकर चन्द्रमा तथा अन्य ग्रह हमको दिखलाई देते हैं। चन्द्रमा आदि अन्य गृह देखने

में जो प्रकाशमान प्रतीत होते हैं वह वास्तव में प्रकाशमान नहीं हैं किन्तु सूर्य्य का प्रकाश उनके ऊपर पड़कर उनको प्रकाशित कर देता है। यह सूर्य्य का प्रकाश अन्य ग्रहों के शरीर से छिटक कर (Reflect) जो हमारी आंखों तक पहुंचता है वह हम पृथिवी निवासियों को धोके में डालता है अर्थात् हमें ऐसा प्रतीत होता है कि मानो प्रत्येक गृह स्वयं प्रकाशमान है। सूर्य्य गृहण तथा अन्य ग्रहों के गृहण में अन्तर यह है कि सूर्य्य गृहण के समय सूर्य्य का प्रकाश कहीं चला नहीं जाता किन्तु चन्द्रमा के बीच में आने से उसका प्रकाश हमारे नेत्रों तक नहीं पहुंच सकता किन्तु अन्य गृहों का वह भाग जो हमारे नेत्रों के सामने है सूर्य्य और उस गृह के बीच में चन्द्रमा के आने से प्रकाश हीन हो जाता है अर्थात् सूर्य्य का प्रकाश गृह के उस भाग को प्राप्त नहीं होता। सूर्य्य गृहण दिन में होता है तथा अन्य गृहों के गृहण रात्रि में होते हैं। अधिक अन्तर होते हुये भी सूर्य्य का प्रकाश हमारी आंखों तक पहुंचता है। हमें किसी दुर्बीन की आवश्यकता नहीं परन्तु बुद्ध (Mercury) तथा शुक्र (Venus) का प्रकाश बिना दुर्बीन की सहायता के हमारी आंखों तक नहीं पहुंचता। इसका कारण यह भी है कि जो प्रकाश किसी दूसरी वस्तु से छिटक कर (Reflect) हमारी आंखों तक आता है वह ऐसा तेज़ नहीं होता जैसा कि सीधा (Direct) आने वाला।

प्रश्न—इसका क्या कारण है कि सूर्य्य गृहण सदा अमावश्या पर होता है और चन्द्र-गृहण पूर्णिमा पर ?

उत्तर-अमावश्या पर चन्द्रमा, सूर्य्य और पृथ्वी के बीच में आजाता है। ऐसी दशा में सम्भव है कि चन्द्रमा बीच में पड़ कर सूर्य्य की किरणों को रोक ले और हमारी आंखों तक न

आने दे। इसी दशा का नाम सूर्य्य ग्रहण है। जब सूर्य्य पृथ्वीके एक ओर हो और चन्द्रमा दूसरी ओर तो चांद का प्रकाशमान भाग पृथिवी निवासियों के सन्मुख होता है और इसी का नाम पूर्णमाशी (Full-moon) है और क्योंकि पूर्णिमा पर पृथिवी, चन्द्रमा और सूर्य्य के मध्य में होती है तो सम्भव है कि सूर्य्य की किरणों को चन्द्रमा तक न पहुँचने दे अथवा सूर्य्य के प्रकाश को रोक कर चन्द्र ग्रहण पैदा कर दे। इस प्रकार सूर्य्य ग्रहण अमावश्या (New moon) पर होसकता है और चन्द्र ग्रहण पूर्णिमा (Full moon) पर।

प्रश्न—जब ऐसा है तो प्रत्येक अमावश्या पर सूर्य्य गृहण और प्रत्येक पूर्णमाशी पर चन्द्र ग्रहण होना चाहिये किन्तु ऐसा नहीं होता। बहुतसी अमावश्मा व पूर्णिमा ख़ाली चली जाती हैं। इस का क्या कारण है?

उत्तर—इस प्रश्न के पूरे पूरे उत्तर के लिये ज्योतिष गणित (Astronomy) के एक बड़े भाग की आवश्यकता है। यदि विस्तार पूर्वक उतर दिया जाय तो बहुत से चित्र तथा एक बड़ी पुस्तक की आवश्यकता होगी। संक्षेप से इस का उत्तर इस प्रकार है कि ज्योतिष जानने वाले गणितकारों ने (Astr-omoners) सूर्य्य पृथिवी और चन्द्रमा के शरीर, परस्पर अन्तर, गति, मार्ग चक्र इत्यादि का ध्यान रखते हुये ग्रहण के लिये निम्न लिखित स्थान सीमा (Spacial limit) और समय सीमा (Time limit) नियत कर दी हैं।

सूर्य्य ग्रहण के लिये सीमा (Limits for solar eclipse) :—

सूर्य्य ग्रहण उस समय ही होसकता है जब कि अमावश्या

पर सूर्य्य का नोड * (Node)से कोनिक अन्तर (Angular distance) १८ दर्जे तथा ३६ मिनट से अधिक न हो। यदि यह अन्तर १३ दर्जे ४२ मिनट से कम है तो गृहण अवश्य होगा और अधिक होने पर निश्चय करना पड़ेगा कि गृहण होगा या नहीं। और जब यह अन्तर १८ दर्जे और ३६ मिनट से अधिक है तो गृहण का होना असम्भव है।

चन्द्र ग्रहण की सीमा (Limits of lunar eclipse)

जब पूर्णिमा पर यह अन्तर ६ दर्जे से कम है तो चन्द्र गृहण अवश्य होगा और जब १२॥ दर्जे से अधिक होगा तो गृहण का होना असम्भव है और इन दोनों सीमाओं के मध्य में निश्चय करने की आवश्यकता है।

प्रायः अमावश्या व पूर्णिमा पर गृहण न होने का कारण यह है कि चन्द्रमा का मार्गचक्र (Orbit) समतल (Plane) नहीं है जिस में कि सूर्य्य का कल्पित मार्गचक्र बतलाया जाता है किन्तु एक समतल (Plane) दूसरे से ५ दर्जे ९ मिनट झुका हुआ है। यदि दोनों के मार्गचक्र (Orbit) गोल और एक ही समतल में होते तो प्रत्येक अमावश्या व पूर्णिमा पर गृहण दिखलाई पड़ता।

---

*नोट—प्रत्येक गृह का मार्गचक्र (Orbit) सूर्य्य के कल्पित मार्गचक्र (Orbit) को दो स्थानों पर काट सकता है। इन स्थानों को नोड (Node) कहते हैं। चन्द्रमा का मार्ग-चक्र (बढ़ाये जाने से) सूर्य्य के कल्पित मार्गचक्र को दो स्थानों पर काटेगा। यह दो स्थान चन्द्रमा के नोड (Node) कहलाते हैं। ध्यान रहे कि चन्द्रमा का मार्गचक्र (Orbit) न तो सर्वथा गोल है न एक समतल।

प्रश्नः—कल्पित मार्ग चक्र कैसा ? क्या वास्तव में सूर्य घूमता नहीं है ? प्रतीत तो ऐसा ही होता है कि सूर्य पृथ्वी के चहुँओर घूमता है तथा गिने चुने मनुष्यों को छोड़कर सब ही यह मानते और जानते हैं कि सूर्य घूमता है।

उत्तर—प्रतीत होने की तो रहने दो किसी स्थान पर धूप में और कभी २ चान्दनी में भ बालू रेत बहता हुआ पानी प्रतीत होता है उसको मृग-तृष्णा (Mirage) कहते हैं और रस्सी का सांप प्रतीत होना तो एक साधारण सा उदाहरण है। रेल में सवार यात्रियों का ध्यान जब बाहर की वस्तु अर्थात् वृक्ष आदि की ओर होता है तो उनको यह वृक्ष उल्टी ओर भागते हुये प्रतीत होते हैं तो क्य अपनी गति का ज्ञान होने पर वह रेल को खड़ी हुई मान लेंगे। जिस मनुष्य को किसी वस्तु का सच्चा ज्ञान हो उसी की बात मानने योग्य है और शास्त्रवेत्ताओं का ज्ञान यथार्थ होता है। बहुत से शारीरिक रोग ऐसे होते हैं कि जिनको साधारण मनुष्य ऊपरी आसेव व भूत प्रेत बतला देते हैं। किन्तु वैद्य वा हकीम जो उस रोग की चिकित्सा करनी जानता है उसको शारीरिक रोग ही कहेगा। प्रत्येक विषय के शास्त्र वेत्ता का वाक्य ही प्रमाण हो सकता है। आकर्षण शक्तिः (Attraction) का नाम तुमने अवश्य सुना होगा और यह सम्भव है कि चुम्बक पत्थर की ओर लोहे को खिचता हुआ भी देखा हो। वृक्ष से जब आम टूट जाता है तो पृथ्वी पर क्यों गिरता है ऊपर को क्यों नहीं उड़ता। इस का कारण पृथ्वी की आकर्षण शक्ति है जिसको ग्रैविटेशन (Gravitation) अथवा पृथ्वी के केन्द्र की ओर खैंच करले जाने वाली शक्ति कहते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक छोटी वस्तु को उस से बड़ी चीज़ अपनी तरफ़ खींच लेती है। शक्ति शास्त्रवेत्ताओं ने (Physicists) शास्त्रोक्त परीक्षा (Scientifice

experiments) द्वारा मालूम किया है कि प्रकाश (Light) एक सेकन्ड में १८६३३० मील की गति से चलता है। और ज्योतिष शास्त्र के जानने वालों ने मालूम किया कि हमारे पास तक आने में सूर्य के प्रकाश को ४६६ सेकण्ड लगते हैं। इस प्रकार विदित हुआ कि सूर्य का औसत अन्तर (Mean-distance) पृथ्वी से लगभग ६ करोड़ ३० लाख मील है। औसत अन्तर कहने का अर्थ यह है कि पृथ्वीसदा सूर्य से एक ही फासले पर नहीं रहती, उसका मार्ग-चक्र अण्डाकार होने से सूर्य का अन्तर घटता बढ़ता रहता है। एक समय ६ करोड़ ६० लाख (९६००००००) मील हो जाता है और एक समय केवल ६ करोड़ (९०००००००) मील रह जाता है। अन्तर मालूम होने से सूर्य की परिधि (Diameter) मालूम करली जो ८ लाख ६६ हज़ार पानसो मील (८६६५००) अथवा पृथ्वी की परिधि से ११० गुनी पाई गई और सूर्य्य पृथ्वी से १३ लाख (१३०००००) गुना बड़ा पाया गया। अब तुम सरलता से ज्ञात कर सकते हो कि कौन किस के चारों तरफ़ घूम सकता है। पृथ्वी सूर्य के चहुँ ओर अथवा सूर्य पृथ्वी के चारों ओर। शास्त्र के जानने वालों और मानने वालों ने पृथ्वी को ही घुमाया है और शास्त्र के जानने वाले गिने चुने होते ही हैं।

प्रश्न—नोड (Node) का स्थान नियत है वा बदलता रहता है?

उत्तर—नोड (Node) का स्थान नियत नहीं। चन्द्रमा के नोड (Node) की वक्र गति है (Retrograde motion) अथवा प्रतिदिन ३ मिनट १० २/३ सेकण्ड पीछे को हट जाता है और सूर्य की कल्पित गति ५६ मिनट ८ १/३ प्रति सेकण्ड है। इस प्रकार नोड (Node) के सम्बन्ध में सूर्य की गति ६२ मिनट

२९ सेकण्ड होती है। इस रीति से ३४६.६२ दिन में सूर्य उसी नोडपर लौट आता है और १७३ दिनमें दूसरे नोड (Node) पर पहुँच जाता है। यदि दोनों नोड (Node) को मिलाने वाली रेखा एक ही नियत स्थान में होती तो प्रति वर्ष सूर्य किसी नियत दिन पर नोड (Node) के समीप पहुँच जाया करता और सूर्य तथा चन्द्र गृहण वर्षों एक ही मास में हुआ करते।

प्रश्न—वर्ष भर में एक नोड (Node) पर कितने गृहण हो सकते हैं? और इन में से कितने सूर्य के व कितने चन्द्र के?

उत्तर:—तुमको स्मरण होगा कि चन्द्र मास २९.५३ दिन का होता है जिस को अंग्रेज़ी भाषा में ल्यूनेशन (Lunation or synodical month) कहते हैं। एक नये चन्द्र से दूसरे नये चन्द्रमा का अन्तर (Lunation) कहलाता है। बस अमावश्या और पूर्णिमा अथवा (New moon & Full moon) में लगभग १४$\frac{3}{4}$ दिन का अन्तर हुआ और इन १४$\frac{3}{4}$ दिन में सूर्य्य और नोडमें १४$\frac{3}{4}$ × ६२°१९″ अथवा १५$\frac{1}{3}$ दर्जे का अन्तर हुआ। बस यदि एक पूर्णिमा (Full moon) ठीक नोड पर होती है तो उस से पहला और पिछला नया चांद (New moon) उस नोड से १५$\frac{1}{3}$ दर्जे के अन्तर पर होगा और क्योंकि यह अन्तर सूर्य गृहण की बड़ी सीमा (Superior limit) से कम है इसलिये इस नोड (Node) पर तीन गृहण सम्भव हैं। दो सूर्य के और एक चन्द्रमा का। यदि किसी नोड पर अमावश्या अर्थात् नया चान्द (New Moon) होता है तो उस से पहली व पिछली पूर्णमाशी अर्थात् (Full Moon) चन्द्र गृहण की बड़ी सीमा (Superior Lunar Ecliptic limit) के बाहर होगी। बस इस नोड पर केवल एक सूर्य-गृहण हो सकता है। यदि नया चान्द (New Moon) अथवा पूरा चांद (Full Moon) ठीक नोड पर न हो किन्तु नोड से दो दिन के

अन्तर पर इधर उधर हो तो भी गृहण की संख्या में कोई भेद न होगा। सारांश यह है कि जब कभी सूर्य किसी नोड पर से गुज़रता है तो एक गृहण अवश्य होगा और अधिक से अधिक तीन की सम्भावना हो सकती है।

प्रश्न—प्रतिवर्ष कितने गृहण अवश्य होंगे और अधिक से अधिक कितने की सम्भावना हो सकती है ?

उत्तर—एक नोड से दूसरी नोड तक पहुँचने के लिये सूर्य को १७३ दिन चाहियें। और ६ चन्द्रमास (Lunations) में १७७ दिन होते हैं। बस यदि चन्द्र-गृहण ठीक किसी नोड पर होता है तो दूसरे नोड पर सूर्य के पहुँचने से ४ दिन पश्चात् चन्द्रगृहण होगा और इस दूसरे नोड पर तीन गृहण नहीं हो सकते केवल एक चांद गृहण ही होगा परन्तु यदि पहले नोड पर सूर्य के पहुँचने से दो दिन पहले चन्द्र-गृहण होता है तो दूसरे नोड पर सूर्य के पहुँचने से दो दिन बाद चांद गृहण होगा और इस प्रकार प्रत्येक नोड पर तीन २ गृहण होंगे और क्योंकि ३५६ दिन में सूर्य दुबारा पहले नोड पर पहुँच जायेगा तो सूर्य के नोड पर पहुँचने से ६ दिन बाद एक और चांद ग्रहण हो सकता है। किन्तु इस दूसरी बारी में पहले नोड पर तीन ग्रहण नहीं होंगे केवल दो हो सकते हैं, एक तो यही चन्द्र-ग्रहण और दूसरा इस से पहली अमावश्या पर सूर्य-ग्रहण। और क्योंकि अन्तिम सूर्य ग्रहण पहले नोड के पहले सूर्य-गृहण से १२ चन्द्रमास अथवा ३५४ दिन में हुआ और अन्तिम चन्द्रग्रहण १२½ चन्द्रमास तथा ३६८¾ दिन में। बस इसकी गणना पहले साल में नहीं हो सकती। इस लिये एक साल में अधिक से अधिक ७ ग्रहण हो सकते हैं यदि पहला ग्रहण जनवरी मास के आदि में हो। इन सात में से ५ सूर्य ग्रहण व दो चन्द्रग्रहण या चार सूर्यग्रहण और तीन चन्द्र

ग्रहण होंगे। इसी प्रकार से यह सिद्ध होगा कि यदि किसी नोड पर केवल एक सूर्यग्रहण होता है तो दूसरे नोड पर भी एक ही सूर्य ग्रहण होगा और इस दशा में उस साल में कम से कम २ सूर्य-ग्रहण होंगे।

प्रश्न—आप के कथन से तो चन्द्रग्रहण की अपेक्षा सूर्य ग्रहण की संख्या अधिक होती है, किन्तु देखने में तो चांद गृहण अधिक आते हैं इस लिये आप का कथन असत्य भाषण युक्त (Paradoxical statement) प्रतीत होता है।

उत्तर—तुम्हारा तर्क व संशय वृथा नहीं। वास्तव में चन्द्र ग्रहण अधिक देखने में आते हैं। कारण यह है कि पृथ्वी के उस अर्धभाग (Hemisphere) पर बसने वालों को जहां रात्रि है चांद्गृहण सब को दिखलाई देता है किन्तु सूर्य गृहण केवल एक छोटे भाग के निवासियों को दिखलाई देता है। इस रीति से ऐसे बहुत से सूर्य गृहण होते हैं जो हम को दिखलाई नहीं देते किन्तु अन्य देश निवासियों को दीखते हैं। १८ वर्ष की अवधि में लगभग ७० गृहण होते हैं जिन में से ४१ सूर्य के और २६ चांद के।

प्रश्न—सर्व-गृहण बहुत कम दिखलाई देते हैं। अधिक तर थोड़े अंश वाले ही होते हैं। इस का कारण क्या है? कोई २ सूर्य गृहण ऐसे भी होते हैं कि बीच में अंधेरा और सूर्य के चारों ओर प्रकाश रहता है। किन्तु ऐसा कोई चांद गृहण देखने व सुनने में कभी नहीं आया।

उत्तर—किसी एक स्थान के लिये सूर्य्य के सर्व गृहण वास्तव में बहुत कम होते हैं। यहां तक कि लन्दन में सूर्य्य का एक सर्व-ग्रहण सन् ११४० में हुआ, दूसरा सन् १७१५ में अर्थात् ५७५ वर्ष पश्चात् इसके पीछे तीसरा सर्व ग्रहण

सन् १८८७ में हुआ अथवा १७२ वर्ष पश्चात्। सूर्य्य-ग्रहण का विस्तार (Magnitude) और काल देखने वाले के स्थान के साथ बदलता रहता है। जो ग्रहण एक स्थान पर सर्व-ग्रहण या छल्लाकार (Annular) होता है वही सूर्य्य-ग्रहण दूसरे स्थान वालों के लिये कुछ अंश वाला रह जाता है और पृथिवी के सन्मुख अर्धभाग (Hemisphere in front) के बड़े भाग पर यह ग्रहण दिखाई नहीं देता और यह भी बहुत कुछ सम्भव है कि जो सूर्य्य-ग्रहण एक स्थान के वास्ते सर्व हो वही ग्रहण दूसरे स्थान के लिये छल्लाकार होगा। बस किसी नियत स्थान के वास्ते सूर्य्य के सर्व-ग्रहण बहुत ही कम होते हैं।

सूर्य्य के सर्व-ग्रहण की संख्या कम होने का एक कारण और भी है। वह यह कि चन्द्रमा की परिधि (Diameter) जो २१६३ मील है हमारी आंख के पास २८ मिनट ४८ सेकंड से लेकर ३३ मिनट ३२ सेकंड तक का कोन (Angle) बनाती है और सूर्य्य की परिधि जो ८६६५०० मील है ३१ मिनट ३२ सेकंड से लेकर ३२ मिनट ३६ सेकंड तक का कोन बनाती है अर्थात् चन्द्रमा सूर्य्य से इतना छोटा होता हुआ भी बड़ा कोन (Angle) बना सकता है और यही कारण है कि चन्द्रमा पृथिवी और सूर्य्य के मध्य में आकर सूर्य का अंश वाला (Partial ग्रहण ही नहीं बनाता किन्तु सर्व ग्रहण (Total eclipse) और छल्लाकार ग्रहण (Annular) भी बना सकता है।

नोट—सूर्य्य और चन्द्रमा का अन्तर पृथिवी से सर्वदा एक जैसा नहीं रहता। इनके मार्ग चक्र (Orbits) अण्डाकार (Elliptic) होने के कारण घटता रहता है और उस कोन (Angle) के दर्जे भी जो हमारी आंख के सामने बनाते हैं छोटे बड़े होते रहते हैं।

कोन के दर्जे पर ध्यान देने से विदित होता है कि सूर्य्य का सर्व ग्रहण पृथिवी के कितने छोटे भाग को दिखलाई देगा और दो मिनट से अधिक सर्व नहीं रहेगा और यदि इन दो मिनट में ग्रहण देखने वालों का ध्यान किसी और तरफ़ चला गया तो सर्व-ग्रहण देखने का अवसर ही हाथ से जाता रहता है।

चांद ग्रहण छल्लाकार का (Annular) हो ही नहीं सकता, फिर देखने व सुनने में कैसे आवे। चन्द्रमा का (Annular) ग्रहण न होने का कारण यह है कि जिस स्थान पर चन्द्रमा का मार्ग चक्र (Orbit) पृथिवी की छाया को काटता है या उसमें प्रवेश करता है उस स्थान पर छाया की चौड़ाई चांद की परिधि (Diameter) से लगभग ढाई गुनी है अर्थात् ५७०० मील है। ऐसी दशा में चांद का छल्लाकार ग्रहण कैसे हो सकता है अर्थात् कदापि नहीं हो सकता।

चित्र द्वारा ग्रहण के नियम प्रगट करने के पूर्व इन दो बातों पर तुम्हारा ध्यान आकर्षण करने की आवश्यकता है क्योंकि चित्र द्वारा इन बातों का दिखलाना सुगम नहीं किन्तु अधिक कठिन है। पहिली यह कि सूर्य्य व चन्द्रमा के मार्ग एक समतल (Planes) न होने के कारण चन्द्रमा की रक्ष रेखा (Latitude) इन दोनों को एक सीधी रेखा में नहीं आने देती और चन्द्रमा को अवकाश मिलता है कि पृथिवी की छाया से बचकर निकल जाये और प्रत्येक पूर्णिमा पर चन्द्रग्रहण न होने का यही कारण है।

दूसरी यह कि प्रति अमावश्या (New moon) पर जब कि चन्द्रमा पृथ्वी और सूर्य के मध्य में होता है तो उस की छाया की लम्बाई एक सी नहीं रहती क्योंकि पृथ्वी का अन्तर सूर्य से सर्वदा एक सा नहीं रहता और चन्द्रमा जो पृथ्वी के

चारों ओर घूमता रहता है उसका अन्तर सूर्य से एक सा कब रह सकता है। जब कभी भी छाया की लम्बाई इतनी कम हो जाती है कि पृथ्वी तक न पहुँचे तो चांद सूर्य की रोशनी को पृथ्वी तक पहुँचने से रोक नहीं सकता, फिर सूर्य ग्रहण कैसा? और यही कारण है कि प्रत्येक अमावश्या पर सूर्य का ग्रहण नहीं होता।

पुस्तक में दिये हुए चित्र के देखने से विदित होगा कि एक सूंडाकार (Cone) 'अ' 'ब' 'स' सूर्य और पृथ्वी को घेरे हुये है जिस की चोटी अर्थात् शिखर पृथ्वी के दूसरी ओर है। इस आकार के उस भाग में जो पृथ्वी और शिखा के मध्य में है सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँच सकता। अब यदि पृथ्वी के केन्द्र को केन्द्र मान कर और पृथ्वी और चन्द्रमा के अन्तर को अर्ध-परिधि (Semi-diameter or radius) मान कर चन्द्रमा पर होता हुआ एक गोलाकार चक्र खैंचा जाय तो यह चक्र उस सूंडाकार (Cone) को दो चक्र में काटेगा जिनकी परिधि (Diameter) क ख और प फ होंगी और यह नया चक्र पृथ्वी के चारों तरफ़ साधारण रीति से चन्द्रमा का मार्ग चक्र होगा।

यदि चन्द्रमा का कोई भाग क ख के मध्य में आ जाता है तो पृथ्वी के किसी भाग के वास्ते सूर्यग्रहण होगा। यदि चन्द्रमा प फ के मध्य में आ जाता है तो चन्द्रग्रहण होगा।

चित्र के देखने से स्पष्ट है कि क ख, प फ से बड़ा है और इस बात से अनुमान किया जा सकता है कि चन्द्रग्रहण की अपेक्षा में सूर्य ग्रहण का होना अधिक सम्भव है और यही कारण है कि सूर्य ग्रहण की संख्या अधिक होती है।

यदि सूर्य और पृथ्वी के चारों ओर एक दूसरा सूंडाकार

(Cone) ऐसा बनाया जाय कि जिसकी रेखा के एक ओर सूर्य हो और दूसरी ओर पृथ्वी और उसका शिखर ल हो जो अवश्य पृथ्वी और सूर्य के मध्य में होगा तो यह सूंडाकार (Cone) चन्द्र मार्ग को पृथ्वी के दूसरी ओर एक गोलाकार चक्र में काटेगा जिसकी परिधि ट ठ होगी । अब ज्यों ही चन्द्रमा ट ठ में प्रवेश करेगा तो सूर्य का थोड़ा सा प्रकाश उसको प्राप्त होगा अथवा चन्द्रमा का प्रकाश मलीन पड़ जायेगा ।

गहरी अंधेरी का नाम जिसको पृथ्वी की छाया कहते हैं अम्बरा (Umbra) है और इसके दोनों ओर जो धुंधला भाग है उसको पीनम्बरा (Penumbra) कहते हैं । इस धुंधले भाग में सूर्य का प्रकाश बहुत कम होता है । जितने समय चन्द्रमा इस धुंधले भाग में रहता है उसको सूतक पातक कहते हैं । जब चांद इस धुंधले भाग (Penumbra) में प्रवेश करता है तो उसको सूर्य का प्रकाश कम मिलता है और उसकी कान्ति मलीन हो जाती है । परन्तु जब तक गहरी अंधेरी में न पहुँचे उसका ग्रहण आरम्भ नहीं गिना जाता ।

प्रश्न—पीनम्बरा (Penumbra) में चन्द्रमा के रहने को सूतक पातक क्यों कहते हैं ?

उत्तर—ज्योतिष शास्त्र (Astronomy) में इसका कोई विधान नहीं पाया जाता । सम्भव है कि फलित ज्योतिष में इसका कारण वर्णन किया हो । हिन्दुओं का ऐसा बिचार है कि जिस घर में उत्पत्ति या मृत्यु हो वह कुल कुछ समय के लिये अपवित्र अर्थात् दूषित हो जाता है । उत्पत्ति के समय दूषित होने का नाम सूतक है और मृत्यु के समय अपवित्र होने को पातक कहते हैं । इस कुल के किसी व्यक्ति के हाथ का छुआ

हुआ अन्न जल उस समय तक कोई ग्रहण नहीं करता ।

ग्रहण के आदि और अन्त में पीनम्बरा (Penumbra) होता है। यदि ग्रहण के समय को मनुष्य - जीवन मान लिया जाये तो उसका आदि और अन्त, उत्पत्ति और मृत्यु कहला सकते हैं। बहुत कुछ सम्भव है कि इसी कारण से चन्द्रमा के पीनम्बरा (Penumbra) में रहने के समय को सूतक पातक मानते हैं।

प्रश्न—ग्रहण के समय हिन्दु लोग बहुधा खाना पीना, काम काज करना, चारपाई पर बैठना त्याग देते हैं। पाठ पूजा, स्नान ध्यान और दान पुण्य करते हैं। और बहुत से तो भयभीत भी हो जाते हैं। इस का क्या करण है ?

उत्तर—बहुत से हिन्दुओं का ऐसा विचार है कि सूर्य और चन्द्रमा पर आपत्ति आने का नाम ग्रहण है अथवा ग्रहण के समय को आपत्ति काल मानते हैं और आपत्ति काल में मनुष्य दान पुण्य करता है केवल हिन्दु ही नहीं । ज्योतिष शास्त्र कहीं ऐसा नहीं कहता कि ग्रहण का समय सूर्य व चन्द्रमा के लिये आपत्ति काल है। हिन्दुओं का यह विचार आज का नहीं है किन्तु प्राचीन है और ज्योतिष शास्त्र के आदि से चला आता है। प्रत्येक शास्त्र का आदि अन्धकारमय रहता है। जब तक उसकी पूरी २ उन्नति न हो जाये बहुत सी मिथ्या कल्पनायें घेरे रहती हैं। यही कारण है कि हिन्दू, ऐसीरियन, अरब, रोमन, ग्रीक्स सब ही जातियों में ज्योतिष के सम्बन्ध में ऐसी कल्पनायें पाई जाती हैं। परन्तु हिन्दुओं का विचार निरर्थक नहीं है। ग्रहण के समय यदि चांद सूर्य के लिये नहीं तो पृथ्वी निवासियों के लिये बुरा प्रभाव हो सकता है, विशेषतः सर्व ग्रहण के समय । ऐसे समय में मनुष्य का भयभीत होना प्राकृतिक नियम के अनुकूल है प्रतिकूल नहीं।

सूर्य के सर्व ग्रहण का समय वास्तव में भयानक होता है। वृक्षों, पक्षियों, पशुओं और कीड़े मकोड़ों पर भी ऐसे ग्रहण का गहरा प्रभाव होता है। देखने में आया है कि सर्व-सूर्य-ग्रहण के समय कोई २ छोटे पौदे अपनी खिली हुई पत्तियों को सिकोड़ लेते है। पक्षी आकाश छोड़ कर अपने अपने घोंसलों में आ बैठते हैं। हिंसक जन्तु अपने शिकार छोड़ देते हैं। मक्खियां अपने छत्ते में जा छिपती हैं। पिञ्जरों में बन्द पक्षी तो जी छोड़ देते हैं और अपने सिर पैरों में छिपाकर मरे जैसे हो जाते हैं। कीड़े बोलना बन्द कर देते हैं चमगादड़ उड़ने लगते हैं। कोई २ घोड़े ऐसे भयभीत हो जाते हैं कि चलते चलते सड़क पर जी छोड़ बैठते हैं। बैलों के समूह घेरा घेर कर खड़े हो जाते हैं और सिर बाहर की तरफ़ कर लेते हैं मानो किसी शत्रु से सामना करना है। मिथ्या विचार वाले मनुष्यों का तो कहना ही क्या ? वह तो ऐसा मान लेते हैं कि राक्षस व दानव सूर्य और चन्द्रमा को निगल रहा है।

कोई २ बुरी तरह से चींखते और चिल्लाते हैं और ज़ोर २ से संख घड़ियाल आदि बजाते हैं जिससे राक्षस डर कर भाग जाय। हिन्दुओं में ऐसे अन्ध विश्वासी बहुत पाये जाते हैं। किन्तु जितना उनका झूंठा विश्वास निन्दनीय है उतना-ही, किन्तु उससे भी कहीं अधिक उनकी दयालुता, उनका प्रेमभाव प्रशंसनीय है। यह जानते हुये भी कि हम कुछ नहीं कर सकते येह लोग सूर्य और चांद जैसी वस्तुओं को भी कष्ट में नहीं देख सकते। उन से इन को भी दुख में देखा नहीं जाता। और क्यों नहीं ? यह तो वह लोग हैं कि जन्मपर्यन्त मुर्दों को भी जल पान कराते रहते हैं। शाहजहां बादशाह ने अपने पुत्र औरंगज़ेब से यही तो कहा था कि धन्य हैं वह (हिन्दू) लोग जो मुर्दों को भी पानी पिलाते हैं और तू जीते जी बाप को पानी से तरसाता है।

प्रश्न—आपने अपने कथन में किसी स्थान पर कहा है कि मंगल बुद्ध आदि सब ग्रहों के ग्रहण होते हैं। सूर्य्य-ग्रहण में तो चन्द्रमा ने सूर्य्य और पृथिवी के मध्य में आकर सूर्य्य के प्रकाश को रोक लिया और पृथिवी तक पहुंचने न दिया। चन्द्र-ग्रहण में पृथिवी ने बीच में आकर बेचारे चांद को सूर्य्य के प्रकाश से वञ्चित कर दिया। यदि और ग्रहों के ग्रहण होते हैं तो उनके प्रकाश को कौन रोक लेता है ?

उत्तर— पृथिवी पर रहने वालों को जो ग्रहण भी दीखेगा उसमें चन्द्रमा का हाथ होगा। ऐसे कर्मों के लिये चन्द्रमा महाराज नारद जी हैं जो हर जगह टांग अड़ाते फिरते हैं।

प्रश्न—सूर्य्य और पृथिवी के बीच में तो बुद्ध और शुक्र भी आते रहते हैं, फिर इनके बीच में आने से सूर्य्य-ग्रहण क्यों नहीं होता ?

उत्तर—पृथिवी वालों के लिये तो चन्द्रमा ही ग्रहण का ठेकेदार है। यद्यपि चन्द्रमा और सब गृहों से छोटा है परन्तु और गृहों से अधिक समीप होने के कारण प्रत्येक गृह के प्रकाश को रोक सकता है। दूसरे गृह पृथिवी से इतने अन्तर पर हैं कि वह पृथिवी वालों को सूर्य्य के प्रकाश से वञ्चित नहीं कर सकते। उनके बीच में आते हुये भी सूर्य का प्रकाश पृथिवी तक पहुंच ही जाता है।

प्रश्न—तो क्या इन ज्योतिष जानने वाले गणित कारों ने सब गृहों को नाप तोल लिया ? सूर्य और पृथिवी से उनके अन्तर मालूम कर लिये हैं ?

उत्तर—इन्होंने छोड़ा ही क्या है ? और इनसे बच ही क्या सकता है ? लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई और अन्तर आदि मालूम कर लेना तो इनके बायें हाथ का खेल है। शक्ति शास्त्र

की सहायता से गृहों के रूप, रङ्ग, हल्का भारी पन, उनकी जल वायु, उनके भ्रमण का समय और उनके गृहण सब ही कुछ तो मालूम कर लिया। उनका ज्ञान आश्चर्यजनक है। साधारण मनुष्य तो उनकी बातें सुनकर भौंचक्का हो जाता है। उड़ती चिड़िया को पकड़ना कोई इनसे सीखे। साधारण मनुष्यों की नज़र बचाकर जो तारे आकाश में चक्कर लगाते हैं ज्योतिषी लोग उनका भी खोज लगा लेते हैं।

प्रश्न—हिन्दू लोग जो नवगृह का पूजन करते हैं वह कौनसी हैं? और फ़ारसी अरबी वालों ने इन गृहों के क्या नाम रक्खे हैं?

उत्तर—नीचे दिये हुये चित्र के देखने से तुम्हारे प्रश्न का उत्तर मिल जायगा।

	अंगरेज़ी नाम	हिन्दी नाम	फ़ारसी नाम
1	Sun	सूर्य्य	आफ़ताब
2	Moon	चन्द्र	महताब
3	Mercury	बुद्ध	उतारिद
4	Venus	शुक्र	ज़ोहरा
5	Mars	मंगल	मिरीख़
6	Jupiter	बृहस्पति	मुश्तरी
7	Saturn	शनि	ज़ोहल
8	Uranus	राहु	......
9	Neptune	केतु	......

हमारे सूर्य मण्डल के मुख्य मेम्बर भी नौ हैं। परन्तु इस विशेषता के साथ कि नवा मेम्बर चांद की जगह पृथिवी है क्योंकि पृथिवी भी सूर्य के चारों ओर घूमती है और चन्द्रमा पृथिवी के चारों ओर घूमता है। यद्यपि पृथिवी के साथ लगा हुआ होने के कारण चन्द्रमा सूर्य के चारों तरफ घूम जाता

है परन्तु वह मुख्य मेम्बर नहीं गिना जा सकता। क्योंकि जिस तरह चन्द्रमा पृथिवी के चारों ओर घूमता है इसी तरह मङ्गल बुद्ध आदि गृहों के साथ जो चन्द्रमा लगे हुये हैं वह भी सूर्य के चारों ओर घूम जाते हैं परन्तु उनकी गणना मुख्य मेम्बरों में नहीं होती। यदि इन सब ग्रहों के चन्द्रमाओं को मुख्य मेम्बर माना जावे तो सूर्य-मण्डल के मेम्बरों की संख्या २० हो जाती है।

प्रश्न—आपने अपने उत्तर में सूर्य-मण्डल के स्थान पर 'हमारे सूर्य-मण्डल' के शब्द से काम लिया है। क्या और भी सूर्य-मण्डल हैं?

उत्तर—मनुष्य अल्पज्ञ है। उसका ज्ञान परिमित है। सृष्टि की रचना अनन्त है। मनुष्य अपने उद्योग व परिश्रम से केवल एक ही मण्डल को मालूम कर सका है परन्तु अनन्त के सिद्धान्त से तो ऐसा ज्ञात होता है कि ऐसे ऐसे अनेक मण्डल होंगे। और सूर्य जो हमारे मण्डल का केन्द्र है सम्भव है किसी इसी बड़े मण्डल का साधारण मेम्बर हो और न मालूम इस बड़े मण्डल के कितने मेम्बर होंगे? और यह भी सम्भव है कि इस बड़ी मण्डली का सरदार सूर्य इस, से भी बड़ी और किसी मण्डली का मामूली मेम्बर हो। हमें तो सृष्टि के क्रम का ओर छोर नज़र नहीं आता। अनन्त रचना का भेद कोई अनन्त ज्ञान वाला ही पा सकता है।

प्रश्न—क्या ज्योतिषी भी ऐसा अनुमान करते हैं कि हमारे सूर्य्य-मण्डल के अतिरिक्त और भी सूर्य्य मण्डल हैं?

उत्तर—ज्योतिष शास्त्र से पता लगता है कि हमारा सूर्य सर्वथा स्थिर नहीं उस में भी एक प्रकार की सूक्ष्म गति पाई जाती है। यह संभव है कि जो गति हमें सूक्ष्म प्रतीत होती है

वास्तव में ऐसी ही हो जैसी कि हमारे सूर्य्य मण्डल के दूसरे मेम्बरों की है। आगे चल कर तारागणों के बयान में विदित होगा कि गति का ज्ञान भी सम्बन्ध पर निर्भर है अर्थात् स्वतंत्र व स्वाधीन नहीं। और पूछड़िया तारों के वर्णन से स्पष्ट विदित होगा कि सृष्टि अनन्त है और जो वस्तु हमारे लिये स्थिर है वह वास्तव में स्थिर नहीं किन्तु चलायमान है। बस ज्योतिषियों का ऐसा अनुमान करना निराधार नहीं।

प्रश्न—कृपा करके इन सब ग्रहों का संक्षेप से वर्णन कर दीजिये।

उत्तर १—पृथिवी के विषय में अधिक विस्तृत वर्णन की आवश्यकता नहीं क्योंकि इस के विषय में साधारण मनुष्यों को भी बहुत कुछ ज्ञान है। इस की परिधि ८००० मील से कम है और इस की गति दो प्रकार की है। एक अपनी कीली के चारों ओर २४ घण्टों में घूमना, जिसे अंग्रेज़ी में रोटेशन (Rotation) कहते हैं। दूसरी सूर्य्य के चारों ओर लगभग ३६५¼ दिन में घूम जाना जिसे अंग्रेज़ी में रिवोल्यूशन (Revolution) कहते हैं।

सूर्य्य के चारों ओर घूमने वालोंमें समीपता से पृथिवीका तीसरा नम्बर है। पहला बुद्ध और दूसरा शुक्र है। यही कारण है कि अन्य ग्रहों की अपेक्षा में बुद्ध और शुक्र छोटे सय्यारे (Inferior Planets) कहलाते हैं। सूर्य से पृथिवी का अंतर (Mean Distance) ९३ ०००००० मील है। और यह भी विदित हो कि सूर्य्य का प्रकाश उल्टा फैंकने में (Reflection) आइने और पानी का काम देता है। चन्द्रमा का अन्धेरा भाग भी जो सूर्य्य के सामने नहीं होता इस उछट कर जाने वाले प्रकाश की सहायता से हम को दिखलाई दे जाता है।

२—सूर्य्य की परिधि (Diameter) पृथिवी की परिधि से ११०गुणी

है अथवा ८६६६५०० मील है। पृथिवी से सूर्य के अन्तर का अनुमान इस प्रकार हो सकता है " यदि सूर्य से पृथिवी तक एक पक्की सड़क बनाई जावे और पृथिवी इस सड़क पर पहिये की तरह घूमकर सूर्य की ओर चले तो सूर्य तक पहुँचने के लिये १० वर्ष से अधिक समय लगेगा क्योंकि एक दिन में पृथिवी एक ही चक्कर तो काटेगी और पृथिवी का घेरा लगभग २५००० मील है और ३७२०० दिनमें सूर्य तक पहुँचती है। यदि पृथिवी को इस लम्बी यात्रा के श्रम से बचाना चाहो तो इस सड़क पर प्रति घण्टा ५० मील चलने वाली एक एक्सप्रेस ट्रेन (Express train) छोड़ दो और एन्जिन ड्राइवर (Engine Driver) को हिदायत कर दो कि स्टेशन पर ठहरे बिना इसी चाल से ले जाये तो ४ शताब्दी और कुछ बरस ऊपर यात्रा करके आप के पास लौट आएगा। इस रीति से भी पृथिवी से सूर्य्य का अन्तर ६३०००००० मील निकलेगा। "

पृथिवी से सूर्य १३००००० गुना बड़ा है। यदि किसी ऐसी खुर्दबीन (Magnifying Glass) के सामने पृथिवी को रख दिया जावे कि वह सूर्य के बराबर नज़र आने लगे तो जो मनुष्य आजकल ५ फुट ६ इं० का नापा जाता है वह ६५० फिट लम्बा नज़र आएगा और यदि पृथिवी की आकर्षणशक्ति (Gravitational force) ऐसी ही बनी रहे जैसी इस समय है तो जो मनुष्य आज कल १॥ मन अथवा १४० पौंड का है वह उन कांटों में नहीं तुल सकेगा जो आजकल रेलवे स्टेशनों पर लगे हुए हैं क्योंकि अब वह १३०००००० टन का हो गया है।

सूर्य की आन्तरिक बनावट में बड़ा भाग गैस का है।

सूर्य का प्रकाश पूर्णमाशी के चन्द्रमा के प्रकाश से ६००००० गुना है। सूर्य की गर्मी का अनुमान इस प्रकार किया जा

सकता है कि यदि किसी जल समूह पर सूर्य की किरणें एक निश्चित समय तक डाली जायें और फिर देखा जाये कि जल किस दर्जे गरम हो गया है अथवा इस समय में जल का टैम्परे- चर (Temperature) कितना बढ़ गया है। शास्त्रोक्त परीक्षा (Scientific experiment) बताती है कि यदि १६५ फ़िट मोटे बरफ़ के कम्बल में पृथ्वी को लपेट दिया जाये और सूर्य की गरमी सारे कम्बल पर बराबर पहुँचे तो वह कम्बल एक बरस में पिघल जायेगा। यदि यह कम्बल सूर्य को उढ़ा दिया जाये तो ३ मिनट में पानी २ हो जायेगा पृथ्वी पर जिस क़दर सूर्य का प्रकाश और गर्मी पहुँचती है वह सूर्य के प्रकाश और गर्मी का एक बहुत छोटा भाग है। इस बात का अनुमान कि पृथ्वी तक सूर्य की कितनी गर्मी पहुँचती है इस तरह हो सकता है "एक कल्पित बिल्लौरी थोथा गोला ऐसा मान लो जिसका केन्द्र सूर्य पर हो और उसका छिल्का केन्द्र से ९३००००० मील के अन्तर पर हो। इस छिल्के में पृथ्वी को किसी जगह ऐसी मान लो कि उस बिल्लौरी गोले में एक पन्ना जड़ा हुआ है। जिस क़दर गर्मी इस छिल्के पर पहुँचती है वह सूर्य की सारी गर्मी है। अब यदि वह पन्ना उखाड़ लिया जाय तो छिल्के में एक छिद्र नज़र आयेगा जिसका रक़बा (Area) ५०००००००० वर्ग मील होगा। क्योंकि पृथ्वी की परिधि ८००० मील के करीब है। इस की अर्ध परिधि के वर्ग को यदि $\frac{२२}{७}$ से गुणा किया जाये तो वही रक़बा (Area) निकल आता है। इस छिद्र के रक़बे (Area) को जो निस्बत कांच के गोले के रक़बे से है वही निस्बत पृथ्वी तक पहुँचने वाली गर्मी को सूर्य की कुल गर्मी से है। हिसाब करने से विदित होता है कि सूर्य का जितना प्रकाश और गर्मी पृथ्वी को पहुँचता है उस से सूर्य की कुल गर्मी और प्रकाश २२०००००००० गुनी है।

कोई २ विद्वान् ऐसा विचार करता है कि सूर्य की गर्मी दिन प्रतिदिन घट रही है परन्तु पृथ्वी का इतिहास इस के विरुद्ध है। पांच हज़ार वर्ष पूर्व जितनी गर्मी पृथ्वी को सूर्य से मिलती थी उतनी ही आज भी मिल रही है। ऐतिहासिक समय में तो गर्मी की कमी का कोई प्रमाण (Proof) नहीं पाया जाता। कल्पित कभी वास्तविक नहीं हो सकती। जो पौदे प्राचीन काल में जहां उगते थे वह पौदे उसी जगह आज भी उग रहे हैं। जिस क़दर धूप की आवश्यकता आजकल लोगों को है उतनी ही पांच हज़ार वर्ष पहले वाले आदमियों को थी। धूप की तेज़ी जितनी पहले दुखदायी थी वैसी आज कल भी है। इसके विरुद्ध कोई माननीय साक्षी नहीं पायी जाती।

शक्ति शास्त्र जानने वालों का (Physicists) यह भी ख़याल है कि सूर्य सुकड़ता जा रहा है अथवा उसका शरीर क्रमशः घट रहा है। यदि यह अनुमान सत्य भी हो तो भी गर्मी की मिक़दार (Quantity) में कमी न होगी क्योंकि शक्ति शास्त्र ही तो बताता है कि सुकड़ने से गरमी पैदा होती है। बस यदि सूर्य का शरीर छोटा होने से उस की गर्मी में कोई कमी आती है जो पृथ्वी को पहले प्राप्त थी तो सुकड़ने से पैदा होने वाली गरमी उस कमी को पूरा कर देती है। सूर्य के सुकड़ने की कल्पना (Theory) सप्रमाण और यथायोग्य मालूम होती है परन्तु इस कल्पना को ठीक मानने से यह बात भी तो ठीक माननी पड़ेगी कि किसी समय सूर्य का विस्तार वर्तमान समय के विस्तार से कहीं अधिक होगा और उस अत्यन्त विस्तार के सुकड़ कर वर्त्तमान विस्तार तक आने से जितनी गर्मी पैदा हुई होगी उसके निकलने के लिये १ करोड़ ८० वर्ष (१००००८०) वर्ष चाहियें।

३—चन्द्रमा की गति के सम्बन्ध में बहुत से मनुष्यों को भ्रम है। वास्तव में पृथ्वी की तरह चांद की भी दो गति हैं। वह अपनी कीली पर घूमता हुआ पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाता है। चन्द्रमा का मार्ग-चक्र गोल नहीं है किन्तु पृथ्वी के मार्ग-चक्र की तरह इस का मार्ग-चक्र भी अण्डाकार है।

चन्द्रमा की परिधि २१६३ मील है और पृथिवी से उसका अन्तर २३८८५० मील है। पृथिवी चांद से ५० गुनी बड़ी है और चांद पृथिवी की अपेक्षा में इतना हल्का है कि यदि तराज़ू के एक पलड़े में पृथिवी रखदी जावे तो पलड़े बराबर करने के लिये दूसरे पलड़े में ८० चांद रखने पड़ेंगे। पृथिवी के चारों ओर घूमने में चांद को २९·५३ अथवा लगभग २९$\frac{1}{2}$ दिन लगते हैं। इस समय का नाम चन्द्रमास रक्खा है। साधारण रीति से ऐसा कहा जाता है। वास्तव में चन्द्रमास का समय इतना नहीं है। ज्योतिष शास्त्र में यह २९$\frac{1}{2}$ दिन का समय साईनौडिकल मास (Synodical month) कहलाता है। एक नये चन्द्रमा से दूसरे नये चन्द्रमा के समय को (Synodical month)कहते हैं। पृथिवी के चारों ओर चन्द्रमा २७.३२ दिन में घूम जाता है। अंगरेज़ी में इस महीने का नाम ल्यूनेशन (Lunation) है। सूर्य और चन्द्रमा के पृथिवी एक ही ओर एक सीधी रेखा में होने को साइनौड (Synod) या कञ्जंक्शन (Conjunction) कहते हैं। ऐसा विचार करना कि इससमय में चन्द्रमा पृथिवी के चारों ओर घूम जाता है, ठीक नहीं। यह वह समय है जिसमें कि चन्द्रमा सूर्य की कल्पित गति से पूरा एक चक्कर अधिक काट लेता है। (Conjunction) अमावश्या अथवा निव मून (New-Moon) को कह सकते हैं इस लिये दो कंजंकशन Conjunction) के बीच के समय की नाप २९·५३ दिन है।

चन्द्रमा एक दिन में १३ दर्जे ११ मिनट चलता है और सूर्य केवल एक दर्जे। बस प्रति दिन चन्द्रमा सूर्य से १२ दर्जे ११ मिनट अधिक चलता है। इस तरह २९·५३ दिन में पूरा एक चक्र अधिक लगा जाता है।

पृथ्वी के चारों ओर चक्कर काटने में चन्द्रमा को २७.३२ अथवा लगभग २७⅓ दिन लगते हैं। इन २७⅓ दिन में चन्द्रमा अपने २७ घरों में (Lunar mentions) जिन को नक्षत्र कहते हैं इसी तरह घूम जाता है जिस तरह कि सूर्य अपनी १२ राशियों पर। परन्तु चन्द्रमा सब घरों में एक सा ही समय बिताता है अर्थात् प्रत्येक नक्षत्र में १ दिन १८ मिनट के लगभग विश्राम करता है।

तिथि का नाम तो तुमने अवश्य ही सुना होगा। इस का सम्बन्ध हिन्दुओं की समय विभाग की रीति से है। बस तिथि का जान लेना और समझ लेना हिन्दू ज्योतिष की समय विभाग की रीति को जान लेना है। चन्द्र दिवस का नाम तिथि है। यदि प्रत्येक ल्यूनेशन (Lunation) के ३० बराबर के भाग किये जावें तो प्रत्येक भाग तिथि कहलायेगा। अन्तिम तिथि का नाम न्यू मून (New moon) अथवा अमावश्या है, परन्तु इस की गणना में इतना भेद है कि कहीं २ अमावश्या बीते हुवे मास का अन्तिम दिन माना जाता है और कहीं २ आगामी मास का प्रथम दिन। इस प्रकार जो अमावश्या एक स्थान पर चैत्र की कहलाती है वही अमाश्या दूसरे स्थान पर वैशाख की कहलाती है। उपरोक्त रीति से प्रत्येक तिथि का समय २९.५३ ÷ ३० दिन होता है अथवा प्रत्येक तिथि २३ घण्टे ३७½ मिनट की होती है।

इन तिथियों के दो भाग किये गये हैं। प्रत्येक भाग में १५ तिथियां ली गयी हैं। प्रथम भाग को शुक्ल पक्ष कहते हैं

और दूसरे को कृष्ण पक्ष । परन्तु संयुक्त-प्रान्त (United-Provinces) में किसी कारण यह रीति बदलगई है । इस प्रांत में कृष्ण पक्ष से महीने का आरम्भ मानते हैं और महीने का अन्त अमावश्या पर नहीं किन्तु पूर्णिमा पर मानते हैं । कृष्ण-पक्ष को वदी कहते हैं और शुक्ल पक्ष को शुदी कहते हैं अथवा अन्धेरे पक्ष को वदी कहते हैं और उजियाले पक्ष को शुदी । इस प्रांत को छोड़ कर यह शब्द और कहीं नहीं सुने जाते । अन्धेरे पक्ष का दूसरा नाम बाहुल दिवस है । बाहुल दिवस का संक्षिप्त रूप (Contraction) व और द होता है इस लिये इस पक्ष का नाम वदी हो गया और शुक्ल दिवस का संक्षिप्त रूप (Contraction) शु और द है जिस से शुदी शब्द बन गया ।

४-सूर्य और पृथ्वी के बीच में दो छोटे सय्यारे (Inferior Planets) हैं । इन में से पहला जो नवग्रहों से छोटा और सूर्य के बहुत समीप है उस का नाम बुद्ध (Mercury) है जिस को अरबी वाले उतारिद कहते हैं । दूसरे का नाम शुक्र (Venus) है जिसको फ़ारसी वाले ज़ोहरा कहते हैं ।

यह दोनों छोटे सय्यारे क्यों कहलाते हैं, इस का कारण यह है कि पृथ्वी की अपेक्षा में सूर्य से इन दोनों का अन्तर कम है और इसी कारण यह दोनों सर्वदा कञ्जङ्कशन (Conjunction) में अथवा सूर्य के साथ पृथ्वी के एकही ओर होते हैं । कभी अपोज़ीशन (Opposition) में नहीं आ सकते अथवा ऐसा होना असम्भव है कि सूर्य पृथ्वी के एक ओर हो और इन में से कोई एक दूसरी ओर । परन्तु इनका एक ओर होना (Conjunction) दो भेद का है । एक का नाम बड़ा सम्बन्ध (Superior Conjunction) है । यह उस समय होता

है जब पृथ्वी और इन में से किसी एक के बीच में सूर्य आ जाता है। दूसरे का नाम छोटा सम्बन्ध (Inferior Conjunction) है। ऐसा उस समय होता है जब बुद्ध या शुक्र, पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जावे।

सम्भव है कि तुम्हारे मन में यह शंका उत्पन्न हो कि जब बुद्ध या शुक्र पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जाता है तो सूर्य ग्रहण क्यों नहीं हो जाता। इस का समाधान इस प्रकार है कि यह दोनों सूर्य के इतने समीप हैं और पृथ्वी से इतने अधिक अन्तर पर कि इन की छाया पृथ्वी तक नहीं पहुँच सकती और वह सूर्य के प्रकाश को रोक नहीं सकते। अर्थात् इन के बीच में आते हुये भी सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक बराबर पहुँचता रहेगा। इस लिये इन के बीच में आने से सूर्य-ग्रहण नहीं हो सकता। सूर्य और पृथ्वी के बीच में इन के आने को अन्तर्गत होना कहते हैं।

नीचे दिये हुये चित्र के देखने से स्पष्ट विदित होता है कि बुद्ध की छाया का शिखर अ है। इस से आगे छाया नहीं जाती और शुक्र की छाया का शिखर व पर है। बुद्ध और शुक्र को घेरतेहुये जो दो सूंडाकार चित्र (Cones) सूर्य से खींचे गये हैं वह पृथ्वी तक नहीं पहुँचते परन्तु बीच में ही समाप्त हो जाते हैं। फिर सूर्य-ग्रहण कैसा ?

इस चित्र के बनाने और समझने के लिये निम्न लिखित बातें उपयोगी हैं:—

१—यदि सूर्य से बुद्ध का अन्तर ६ माना जाये तो शुक्र का ११ और पृथ्वी का १५½ होगा।

२—यदि बुद्ध की परिधि १ मानी जाये तो शुक्र और पृथ्वी की २॥ और सूर्य की २८९ होगी।

मार्च और अप्रैल के महीने में सूर्य अस्त के उपरान्त ही दुर्बीन की सहायता बिना हम बुद्ध को देख सकते हैं। सूर्य से इस का अन्तर ३६०००००० मील है और इसकी परिधि केवल ३००० मील है। इसका मार्ग-चक्र गोलाकार से बहुत कुछ हटा हुआ है। यदि इस को ऐक्सैन्ट्रिक (Eccentric) कहा जाये तो अनुचित न होगा क्योंकि एक समय सूर्य से इस का अन्तर २८०००००० मील रह जाता है और दूसरी बार ४३५०००००० मील हो जाता है। इसका वर्ष हमारे ८८ दिन का होता है अथवा सूर्य के चारों ओर यह ८८ दिन में घूम जाता है। फ़ारसीवाले इसको दबीर फ़लक अथवा आकाश का मुन्शी और कातिबे क़िस्मत भी कहते हैं मानो धर्मराज का दफ़्तर इन्हीं के हाथ में है अर्थात् मनुष्य के भाग्य-विधाता यही हैं।

५. शुक्र (Venus) जिसको सूक भी कहते हैं। यह दूसरा छोटा सय्यारा (Inferior Planet) है। बुद्ध की अपेक्षा में यह बहुत बड़ा और अधिक प्रकाश वाला है।

सूर्य से इसका अन्तर ६७०००००० मील है। इसका मार्ग-चक्र (Orbit) गोलाकार है। और इसका विस्तार पृथिवी जैसा है क्योंकि इसकी परिधि ७७०० मील है। सूर्य के चारों ओर २२५ दिन में घूम जाता है अर्थात् शुक्र का साल हमारे २२५ दिन की बराबर है। ~~पृथिवी की तरह यह भी अपनी कीली पर लगभग २४ घण्टे में घूम जाता~~ है। इसके समतल (Surface) का वृत्तान्त जानने के लिये दुर्बीन (सूक्ष्म दर्शक यन्त्र) द्वारा बहुत कुछ यत्न किया गया परन्तु कुछ सफलता प्राप्त नहीं हुई। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इसके चारों ओर जो वायुगोला (Atmosphere) है वह बहुत गाढ़ा और भारी है, क्योंकि ऐसा गोला ही निष्फलता का कारण हो सकता है।

६. शुक्र के पश्चात् सूर्य के चारों ओर घूमने वालों में पृथिवी है। पृथिवी के पश्चात् ६ ग्रह रह जाते हैं जो बड़े सय्यारे (Superior Planets) कहलाते हैं। इनमें से पहला नम्बर मंगल (Mars) का है जिसको भौम भी कहते हैं।

पृथिवी के साथ तो एक ही चांद लगा है किन्तु भौम देवता के चारों ओर दो चांद घूम रहे हैं जिनके सम्बन्ध में यूनान का पौराणिक शास्त्र (Greek-mythology) ऐसा वर्णन करता है कि संग्राम के देवता के रथ में दो अति वेग वाले घोड़े जुते हुये हैं जिनकी टापों से आकाश में आग उछलती जाती है। सूर्य से मंगल का अन्तर (Mean Distance) १४१५०००००० मील है। इसका मार्ग-चक्र (Orbit) भी गोलाकार नहीं है। बुद्ध की तरह यह भी एक समय सूर्य के बहुत समीप आ जाता है और दूसरे समय बहुत दूर। इन दोनों अन्तरों में २६०००००० मील का अन्तर है। पृथिवी वालों को यह सुगमता से उसी समय दीख सकता है जब पृथिवी इसके और सूर्य के बीच में आ जाये क्योंकि ऐसे ही समय में यह पृथिवी के समीप होता है। जब मंगल अपने पैरीहीलियान (Perihelion) के समीप हो और पृथिवी अपने ऐपहीलियान (Aphelion) के तो इन में केवल ३६०००००० मील का अन्तर रह जाता है। जिस स्थान पर किसी ग्रह का अन्तर सूर्य से कम से कम रहता है उस स्थान को पैरीहीलियान (Perihelion) कहते हैं और जिस स्थान पर यह अन्तर अधिक से अधिक होता है उसको ऐपहीलियान (Aphelion) कहते हैं।

पृथिवी के बहुत समीप आने का अवसर १५ वर्ष में एक ही बार हो सकता है। १६ वीं शताब्दि में ऐसा अन्तिम अवसर अगस्त १८६२ में मिला था। वर्त्तमान शताब्दि में ऐसे

अवसर कब कब होंगे इसका अनुमान सुगमता से हो सकता है। मंगल की परिधि केवल ४२०० मील है और सूर्य के चारों ओर ६८७ दिन में घूम जाता है। अथवा मंगल का एक वर्ष लगभग हमारे २२½ महीने के होता है।

७. बृहस्पति (Jupiter) को हिन्दू ज्योतिष में गुरु कहा है और यूनान के पौराणिक शास्त्र में तो इनको आकाश का राजा ही माना है। मानो हिन्दू पौराणिक शास्त्र का इन्द्र यही है यूनान के पौराणिक शास्त्र में इनकी विचित्र लीला और अद्भुत माया का विस्तृत वर्णन किया है। तारागण के वर्णन से स्पष्ट विदित होगा कि राजा इन्द्र के दरबार में गन्धर्व, किन्नर और अप्सराओं के नाच रङ्ग ही हुआ करते थे किन्तु ज्युपिटर (Jupiter) महाराज सुगमता से मोहिनी जाल में फंस जाते थे। जहां कहीं सुन्दर और रूपवती स्त्री देखी कि फिसल पड़े और अपनी पत्नी जूनों (Juno) के डर से किसी को रीछ बनाया, किसी को भेड़ और किसी को बकरा और समय समय पर अपने शरीर को त्याग कर स्वयं भी पशुओं के शरीर में वास करने लगते थे। जिससे प्रसन्न हो गये उसको आकाश में स्थान दे दिया और जिससे अप्रसन्न उसको उलटा लटका दिया।

सूर्य-मण्डल अथवा सूर्य कुल (Solar System) में तो यह श्रेष्ठ और पूजनीय दिखाई पड़ते हैं। एक पोल से दूसरे पोल तक इनकी परिधि की लम्बाई ८४००० मील है और इक्वेटर (Equator) पर तो पूरी ९०००० मील पाई जाती है। इस परिधि अन्तर के दो ही कारण हो सकते हैं या तो यह कि अपनी कीली पर बड़े वेग से घूमते हों जिससे इनका मध्य भाग बाहर को निकल आये या इनका शरीर किसी ऐसी

फैलने वाली वस्तु का बना है कि साधारण गति पेट को फुला सके। ज्योतिषी लोग (Astronomers) तो ऐसा अनुमान करते हैं कि दोनों ही कारण कार्य कर रहे हैं। सूर्य से इन का औसत अन्तर (Mean Distance) ४८३०००००० मील है अथवा पृथ्वी की अपेक्षा में इन का अन्तर पांच गुना है। सूर्य के चारों ओर घूमने में इनको ११·८६ वर्ष चाहियें। इनका शरीर अथवा डील-डौल भी अच्छा ख़ासा है जिस में हमारी १३०० पृथ्वी समा सकती हैं। यदि ऐसा कहा जाये कि शेष सब ग्रह मिल कर भी इनके शरीर को नहीं पा सकते अथवा बराबर नहीं हो सकते तो अनुचित न होगा। गुरू जी महाराज के साथ ~~पांच~~ चेले लगे हुये हैं अथवा ~~पांच~~ चांद परिक्रमा कर रहे हैं।

(८) शनि (Saturn)-हिन्दू ज्योतिष के जानने वालों को छोड़कर प्राचीन काल में सब ही जातियों का और विशेष कर यूरुप देश निवासियों का यह सिद्धान्त था कि सूर्य के चारों ओर घूमने वालों में शनि अन्तिम तारा है। इसके परे और कोई नहीं, क्योंकि १७वीं शताब्दी तक यूरोप में ऐसी ज़बरदस्त दुर्बीन नहीं थी जैसी आजकल, इसी कारण वह लोग शनि से परे कोई और तारा नहीं देखसके और शनि को एक साधारण तारा ही मानते रहे। इन बेचारों को कब ध्यान हो सकता था कि एक दिन वह भी आयगा जब शनि महाराज के रूप, रंग, वर्ण, आश्रम का वृत्तान्त सुनकर दांत तले उंगली दबानी होगी। आन्तरिक चक्षु के लिये शनि का चित्र इस प्रकार खेंचा गया है। मानो एक गेंद है जिसके दोनों सिरे चपटे हैं। जिस कारण छोटी परिधि ७०००० मील है और बड़ी ७५००० मील है। और यह गेंद सूर्य से ८८६०००००० मील के अन्तर पर उस के चारों ओर घूम रही है और २९½ वर्ष में एक चक्र

पूरा करती है इस गेंद के बाहर तीन पतले और चौड़े चपटे प्रकाश वाले छल्ले इसके चारों ओर चक्कर लगाते हुये साथ२ सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं। पहला छल्ला जो गेंद के बहुत समीप है श्यामवर्ण का है उसकी चौड़ाई ६५०० मील है और आन्तरिक सिरा (Inner Circle) गेंद से ७००० मील के अन्तर पर है इसमें और दूसरे छल्ले में जो १७५०० मील चौड़ा है कोई अन्तर नज़र नहीं आता। दोनों छल्ले मिले हुये मालूम पड़ते हैं। केवल रंग भेद एक को दूसरे से अलग करता है। तीसरा अथवा सब से बाहरी छल्ला १०००० मील चौड़ा है और इस का आन्तरिक घेरा (Inner Circle) दूसरे के बाहिरी घेरे (Outer Circle) से २२०० मील के अन्तर पर है। इन छल्लों के विषय में ज्योतिषियों का ऐसा विचार है कि यह अनन्त और असंख्य अत्यन्त ऐसे छोटे २ तारों से बने हुए हैं जो पृथक् २ नज़र नहीं आ सकते। यद्यपि गेंद का विस्तार बहुत बड़ा है परन्तु अधिक वज़नी नहीं मालूम होती। शास्त्रवेत्ताओं का तो ऐसा अनुमान है कि जिस द्रव्य से हमारी पृथिवी बनी है वह शनिके द्रव्य से ८ गुनाभारी है। शनि देवता के साथ ८ चांद लगे हुये हैं। इन में सब से बड़ा हमारे चांद से चौगुना है।

(६) यूरेनस (Uranus) यूरोप वालों ने इस सय्यारे को पहले पहल १३ मार्च सन् १७८१ में देखा था । सूर्य से इसका अन्तर १७८०००००००० मील है और इस की परिधि ३२००० मील है। इसका वर्ष हमारे ८४ वर्ष का होता है अथवा सूर्य के चारों ओर एक चक्कर लगाने के लिये ८४ वर्ष चाहियें। इस के चारों ओर ~~चार~~ पांच चांद घूम रहे हैं और इसके चन्द्रमाओं की गति में यह विशेषता है कि पूर्व से पश्चिम की ओर चलते हैं।

अन्य ग्रहों के साथ जो चांद लगे हैं वह पश्चिम से पूर्व की ओर जाते हैं।

(१०)-नैपच्यून (Neptune) :—सूर्य मण्डल की अन्तिम सीमा पर नैपच्यून ने अपना डेरा जमाया है अथवा सूर्य के चारों ओर घूमने वाले ग्रहों में से इनसे परे और कोई सय्यारा अब तक मालूम नहीं हुआ। मानो सूर्य देवता के राज्य के सरहदी, इलाके के गवर्नर नैपच्यून (Neptune) हैं। इससे परे किसी दूसरे सूर्य का राज्य प्रारम्भ होता है जिस के देखने भालने के लिये पृथ्वी निवासियों को परवाना (Pass Port) नहीं मिल सकता। यह भी संभव है कि दूसरे के राज्य में क़दम रखते ही वहां के राजा के प्रकाश और कान्ति से हमारी आंखे चकाचौन्ध हो जाती हों। सूर्य से नैपच्यन का अन्तर २७७२०००००० मील है। इसकी परिधि ३५०००मील है। यूरेनस (Uranus) के वायुगोले की तरह नैपच्यून का ऐटमास्फियर (Atmosphere) भी बहुत गाढ़ा है। पृथ्वी के वायु-गोले की अपेक्षा में तो इतना गाढ़ा है कि यदि पृथ्वी के वायु गोले में छुन कर सूर्य का प्रकाश जो हमारे नेत्रों तक पहुँचता है ६०० दर्जे का हो तो नैपच्यून के वायु-गोले में छुन कर आने वाला प्रकाश केवल १ दर्जे वाला होगा।

यद्यपि इस स्थान पर नैपच्यून के दरयाफ्त (Discovery) सम्बन्धी इतिहास की आवश्यकता नहीं क्योंकि ऐसे इतिहास की रसना का आनन्द रसिक जन ही भोग सकते हैं। वही इसका अनुमान कर सकते हैं। साधारण मनुष्यों के लिये तो सर्वथा शुष्क ही होगा। यद्यपि गणितशास्त्र शुष्क कहलाता ही है परन्तु इसकी विचित्र लीला और अद्भुत महिमा और

इसके द्वारा संशय और आलस्य पर विश्वास और उद्योग की विजय का ध्यान भली भांति हो सकता है। सन् १७८१ में यूरेनस (Uranus) का स्थान विदित होने पर यूरुप के ज्योतिषियों ने उस के विस्तार और उसकी गति आदि भी जान ली। साठ वर्ष के उपरान्त जब इन ज्योतिषियों ने यूरेनस (Uranus) को उस स्थान पर नहीं पाया जिस पर गणित-शास्त्रानुसार होना चाहिये था तो यह संशय उत्पन्न हुआ कि यूरेनस (Uranus) को कौन और कहां उठा कर ले गया? अपने हिसाब को कई बार जांचा परन्तु ज्यं का त्यं पाया। गणित वेत्ताओं (Mathematicians) को चैन कहां? खाना पीना छूट गया! नींद उड़ गई!! निराशा छाने लगी!!! परन्तु इस निराशा में आशा की झलक दिखाई दी। आकर्षण शक्ति के अटल नियम में ज्योतिषियों के दृढ़ विश्वास ने ढाढ़स बंधाया। गणितकारों को सूचित किया कि ज़ाहिरी नियमभङ्ग का कारण किसी दूसरे सय्यारे (Planet) अथा तारे (Star) की आकर्षण शक्ति के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। इस सूचना को पाते ही गणितकारों को उत्तेजना उत्पन्न हो गई। अक्तूबर सन् १८४५ में आकाश की देख भाल प्रारम्भ कर दी असम्भव को सम्भव करने पर उतारू हो गये। ध्यान देने की बात है कि एक सितारे पर किसी दूसरे ऐसे सितारे की आकर्षण शक्ति का प्रभाव ज्ञात करना, जिसका कुछ भी पता निशान मालूम नहीं कैसी कठिन समस्या है। ऐसी कठिनाई के सन्मुख आना देवासुर संग्राम में उतरना है। ऐसी उलझा हुई गुत्थी को सुलझाना साधारण मनुष्य की शक्ति के बाहर है "सत्य की सदा विजय होती है"। इस कहावत के अनुकूल गणितकारों को सफलता प्राप्त हुई। २३ सितम्बर सन् १८४६ को विदित

हो गया कि ऊपर कहे हुये ज़ाहिरी नियम भङ्ग का कारण नैप्-च्यून (Neptune) है फिर क्या देर थी नैप्च्यून (Neptune) की लम्बाई चौड़ाई, अन्तर आदि सब ही कुछ ज्ञात करलिया।

प्रश्नः—यदि सय्यारों का विस्तार पूर्वक वर्णन किसी यन्त्र अथवा अन्य सूक्ष्म प्रकार से किया जा सकता है तो कृपा करके समझाइये।

उत्तर—नीचे दिये हुवे यन्त्र अवश्य सहायक होंगे।

(१) यन्त्र पहला।

सय्यारों के नाम	सूर्य से इनका औसत अंतर	औसत परिधि	सूर्य के चारों ओर घूमने का समय	चन्द्र संख्या
बुद्ध (Mercury)	३६००००००	३०००	८८ दिन	......
शुक्र (Venus)	६७००००००	७७००	२२५ दिन	......
पृथिवी (Earth)	९३००००००	७८००	३६५ दिन	१
मङ्गल (Mars)	१४१००००००	४२००	६८७ दिन	२
बृह० (Jupiter)	४८३००००००	८७०००	११.८६ वर्ष	१२
शनि (Saturn)	८८६००००००	७२५००	२९.५ वर्ष	९
यूरे० (Uranus)	१७८००००००००	३२०००	८४ वर्ष	५
नेप० (Neptune)	२७९२००००००	३५०००	१६५ वर्ष	१
प्लूटो (PLUTO)		२३००	३०० वर्ष	—

नोटः—इस यन्त्र में जो परिधि और अन्तर दिखलाये गये हैं, वह औसत दर्जे के हैं। क्योंकि पोलर डाईमेटर (Polar Diameter) और ईक्वीटोरियल डाईमेटर (Equatorial Diameter) बराबर के नहीं होते और इन तारों के मार्गचक्र (Orbit) गोलाकार न होने के कारण सूर्य से उनका अन्तर एक सा नहीं रहता।

यन्त्र नं० २

इस यन्त्र के देखने से स्पष्ट विदित होगा कि यह सय्यारे (Planets) सूर्य के चारों ओर कितने कितने अन्तर पर घूमते हैं यद्यपि इस यन्त्र में मार्गचक्र (Orbit) गोलाकार दिखाये गये हैं किन्तु वे वास्तव में अण्डाकार हैं। और इन चक्रों के अन्तर इस रीति से बनाये गये हैं कि सूर्य से बुद्ध के अन्तर को एक मान कर शुक्र का अन्तर २, पृथ्वी का २$\frac{३}{४}$ मंगल का ४, बृहस्पति का १३, शनि का २४$\frac{३}{४}$, (Uranus) का ४६$\frac{१}{४}$, और (Neptune) का ७७$\frac{३}{४}$ माना गया है।

प्रश्नः—पृथिवी वाले सूर्य और चन्द्रमा को बहुत पूजते और मानते हैं, विशेष कर हिन्दु, और इनको देवता मानते हैं। इसका क्या कारण है? और भारतवर्ष के इतिहास में सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी जो शब्द पाये जाते हैं उनका यदि सूर्य और चन्द्रमा से कुछ सम्बन्ध है तो क्या है?

उत्तर—देवता शब्द की पूरी व्याख्या के लिये तो एक बड़े भारी ग्रन्थ की आवश्यकता है। यहां केवल इतना कह देना ही पर्याप्त होगा कि देवता शब्द विशेषकर किसी पूजनीय व्यक्ति के लिये आता है जिसकी शक्ति और कीर्त्ति संसार अथवा पृथ्वी के बड़े भाग में विख्यात व प्रसिद्ध हो। ऐसा व्यक्ति ही पूज्य हो सकता है। यह शब्द महिमा वाचक और मान

द्योतक भी है। मनुष्य को छोड़ कर प्रत्येक ऐसी वस्तु का बोध कराता है जो लाभदायक हो इसी अर्थ को लेकर लोग सूर्य और चांद को पूजते हैं और इनके लिये ईश्वर वाचक शब्दों का भी प्रयोग करते हैं।

हिन्दुओं का तो कहना ही क्या! ३३ करोड़ देवताओं को धन्दे से लगाना इनके लिये आवश्यक ही है। यूनान वालों का पौराणिक शास्त्र भी किसी तरह कम नहीं। और कम हो भी कैसे? जैसे गुरु वैसे ही चेले। हिन्दुओं ने तो ९ देवताओं को नवग्रह मान कर पूजा है और २७ तारों को नक्षत्रों का स्वामी बनाया है सैंकड़ों को दरिया पहाड़ व वृक्ष बना दिया, हज़ारों को बनों और जंगलों में पहरों पर बैठा दिया, लाखों और करोड़ों को तारागण बना कर आकाश में भिन्न २ काम पर नियत कर दिया। अब यदि यूनान और रोम वालों ने गुरु के अनुगामी बन कर ऐपालो (Apollo) को धनुर्विद्या, गानविद्या, वैद्यक शास्त्र और भविष्य वाणी का देवता और दूसरे रूप में अथवा फ़ीबस (Phoebus) के नाम से सूर्य देवता माना तो क्या बुराई की। यदि वृहस्पति (Jupiter) को शनि का का पुत्र मान कर आकाश का ईश और राजा इन्द्र मान लिया तो क्या आश्चर्य्य हुआ। जूनो (Juno) को वृहस्पति की भगिनी-स्त्री मान कर विवाह आदि शुभ कार्यों की देवी बनाने में क्या भूल की। मिनरवा (Minerva) को सरस्वती की पदवी देदी तो क्या आश्चर्य हुआ। वीनस (Venus) को मोह और प्रेम की देवी बनाने में क्या अनुचित काम किया जब हिन्दुओं ने काम और रति को देव स्थान दे रखा हो।

चाँद और सूर्य से जो लाभ होते हैं वह अनमोल और असंख्य हैं। विस्तार के भय से केवल मुख्य २ लाभ नीचे दिखलाये जाते हैं।

(१)चन्द्रमा के लाभः—

चन्द्रमा से पृथिवी निवासियों को सबसे बड़ा लाभ चांदनी अथवा उजियाली रात है। यदि चन्द्रमा का अभाव हो जाये तो हमारी रातें भयानक व डरावनी होंगी। रातों को दिन के समान बनाने के लिये सूर्यदेव ने चन्द्रमा को अपना वाइसराये बना लिया है। यदि पूरे १२ घण्टे नहीं तो ६ घण्टे की औसत से काम करता रहे और पृथिवी निवासियों की अंधेरे की विपदा को हरे।

समुन्दरों में ज्वार भाटे चन्द्रमा की वजह से ही होते हैं। समुद्र से दूर रहने वाले तो ज्वार भाटे के समय को अवश्य आपत्ति काल समझते होंगे। जिसने जो चीज़ देखी नहीं वह उसके लाभ व हानि को क्या समझ सकता है। ज्वार भाटोंके लाभ का अनुमान वही कर सकते हैं जो समुद्र के समीप बसते हैं। लीवरपूल (Liverpool) के व्यौहार को जो उन्नति आज संसार में प्राप्त है वह विशेष कर ज्वार भाटे ही के कारण है। ज्वार भाटे का अभाव होने पर लीवरपूल के व्यौहार का चिन्ह भी न रहे। गधे के सिर से सींग की तरह उड़ जाये। लीवरपूल (Liverpool) के बन्दरगाह का सम्बन्ध समुद्र से एक नेड़ी और तंग नहर द्वारा है। ज्वार भाटे के उतार के समय इस नहर से ६०००००० टन पानी हर ६ घंटे में उतर जाता है। यह पानी नहर की मट्टी, कङ्कर, रेत, पत्थर आदि को बहा कर ले जाता है नहीं तो कुछ समय में नहर अट जाती और माल का आना जाना बन्द हो जाता। चढ़ाव के समय माल के जहाज़ सुगमता से बन्दरगाह पर पहुँच जाते हैं और उतार के समय बिना मेहनत और मज़दूरी समुद्र में चले जाते हैं।

तीसरा लाभ जो चन्द्रमा से होता है वह यह है कि चन्द्रमा हमारे लिये घड़ी का काम देता है गांवों में जहां घड़ी बहुत कम मिलती हैं चांद को देख कर गाँव वाले समय का ठीक अनुमान कर लेते हैं। जहाज़ चलाने वालों के लिये तो चांद बहुत ही उपयोगी है जिस समय इनकी कम्पास (Compass) बिगड़ जाती है और घड़ी काम नहीं देती तो चन्द्रमा इनका सहायक बन कर बताता है कि वह सीधे मार्ग पर जा रहे हैं या नहीं। घड़ी और कम्पास (Compass) का बिगड़ जाना एक साधारण सी बात है ऐसे समय में यदि चांद सहायता न करे तो ईश्वर जाने बेचारे जहाज़ वाले कहां २ टक्कर खायें और कैसी २ दुर्घटनाओं का सामना हो और यात्रियों को कैसी २ आपत्तियाँ भोगनी पड़ें। भूले भटके जहाज़ वाले आकाश में चांद के स्थान को देख कर समय और दिशा का ठीक अनुमान कर लेते हैं। चन्द्र देव ने इतिहासकारों (Historians) की भी सहायता की है। जब कभी किसी घटना की तारीख अथवा तिथि मालूम करने में कठिनाई मालूम हुई और कोई अन्य सहारा न मिला तो चांद ने सहायता की। कारण यह कि जितने भी ग्रहण होते हैं; चांद के हों या सूर्य के वा अन्य ग्रहों के, सब ही में चांद से काम पड़ता है अथवा बिना चांद के कोई ग्रहण नहीं होता। ईसा (Christ) का जन्म दिवस मालूम करने में १३ मार्च सन् ३ बी. सी. (B.C.) वाले चन्द्र ग्रहण से सहायता मिली क्योंकि यह ग्रहण हीरोड (Herod) की मृत्यु पर हुआ था।

जिन लोगों ने कोलम्बस (Columbus) का जीवन-चरित्र पढ़ा है उनको याद होगा कि उसने चांद ग्रहण से किस प्रकार से लाभ उठाया। सन् १५०४ में जब वह जमैका द्वीप (Jamaica Islands) में था तो रसद (खाने पीने का समान) कम हो

गई। द्वीप निवासियों से इसने मदद मांगी परन्तु उन लोगों ने रसद देने से मना कर दिया। दैवयोग से अगले दिन चन्द्र ग्रहण होने वाला था और कोलम्बस (Columbus) को इसकी तारीख मालूम थी जब इसके साथी भूके मरने लगे और कोई अन्य उपाय नहीं सूझा तो यह चाल चली कि उस द्वीप के निवासियों को जो जंगली और असभ्य थे डराकर और धमका कर कहा कि यदि तुम रसद नहीं दोगे तो मैं तुम्हारे चांद के प्रकाश को नष्ट कर दूंगा। उसी रात्रि को चन्द्र ग्रहण हुआ जिसे देखकर द्वीप निवासी भयभीत हो गये और कोलम्बस (Columbus) को बड़ा भारी जादूगर मानकर फौरन ही रसद पहुँचा दी।

जिस समय इतिहासकारों के सामने यह प्रश्न था कि चीन देश किस समय से आबाद हुआ है और वहां पहला बादशाह कौन हुआ तो उनकी सम्मति भिन्न २ पाई गई। जब इस विषय में वह सहमत न हो सके तो चीन के इतिहास का अवलोकन किया। सन् २१५५ बी० सी० (B. c.) में सूर्य ग्रहण लिखा हुआ पाया गया। इस पर ज्योतिषियों की सम्मति ली गई कि उपरोक्त सम्वत् में सूर्य ग्रहण चीन के देश में हो सकता था या नहीं तो ज्योतिषियों ने अनुमोदन किया कि सन् २१५५ बी. सी. (B. C.) में ऐसे सूर्य ग्रहण का होना पाया जाता है जो चीन देश में दिखलाई दे। इस से यह निश्चय हो गया कि चीन देश इस संवत् से बहुत पहले बसा होगा। इस संवत् से पहली बातों पर विचार करना आरंभ हो गया और अन्त में यह निश्चय हुआ कि चीन का पहला बादशाह २३२७ बी. सी. (B. C.) में हुआ।

चन्द्रमा के सम्बन्ध में बहुत से मिथ्या विश्वास भी पाये जाते हैं, और यह अन्ध विश्वास विशेष कर ग्रामों में पाया जाता है। एक कहता है कि यदि सोते हुये मनुष्य की आंख पर चांदनी पड़जाये तो उस को अन्धा बना देगी। दूसरे का ऐसा कथन है कि खीरे, ककड़ी, मूली, और शलजम पूर्णमाशी पर बढ़ते हैं और प्याज़ पूर्णमाशी के पश्चात्। तीसरा कहता है कि जो औषधियां पूर्णमाशी से पहले संग्रह की जाती हैं वह अधिक प्रभाव शाली होती हैं। चौथे का विचार है कि यदि अंगूर की बेल उस रात में झाँगी जाये जब चन्द्रमा सिंह-राशी पर हो तो वह जगंली चूहों और अन्य रोगों से रक्षित रहेगी। कोई कहता है कि आलू अमुक तिथि पर बोना चाहिये और अनाज अमुक तिथि पर। इन मिथ्या भाषणों को यदि छोड़ दिया जाये तो मनुष्य के लिये चांद के उपयोगी होने में कोई संशय नहीं रहता। ऐसी उपयोगी और लाभदायक वस्तु का आदर व सम्मान अनुचित नहीं।

२—सूर्य के लाभ।

सूर्य से जो लाभ मनुष्य को प्राप्त होते हैं उन की गणना और तुलना असम्भव है। यह लाभ अनन्त ही नहीं हैं किन्तु प्रत्येक अनमोल है। सूर्य तो सृष्टि का कर्त्ता धर्त्ता ही मालूम होता है। इस के अभाव से तो जगत का अभाव प्रतीत होता है। संसार में मनुष्य को जो कुछ भी आनन्द प्राप्त होता है वह सब सूर्य के ही कारण है। सूर्य बिना किसी वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती। पृथ्वी वालों के लिये तो सूर्य ईश्वर समान ही है क्योंकि सब चीज़ों की उत्पत्ति, उनका पालन और पोषण इसी पर निर्भर है। ऐसी दशा में यदि मनुष्य सूर्यकी उपासना ऐसी ही करे जैसी कि ईश्वर की तो अनुचित

नहीं हो सकता। अग्नि पूजने वाली जाति वास्तव में सूर्य को पूजने वाली है। बस सूर्य का जितना भी सन्मान किया जाये थोड़ा है।

सूर्य शक्ति का भण्डार है। यदि सूर्य की आकर्षण शक्ति की रस्सी टूट जाये तो न मालूम हमारी पृथिवी किस तङ्ग और अंधेरे गढ्ढे में जाकर गिरे और हमारी क्या दशा हो। यदि सूर्य से हमको गर्मी प्राप्त न होती तो मृत्यु ने हम को कभी का ठण्डा कर दिया होता। समुद्रों का जल जम कर कांच का तख़्ता बन गया होता। नदियां बहना बन्द कर देतीं। वृक्षादि सूखकर मुरझा जाते मनुष्य भूख और सर्दी से पीड़ित होकर प्राण छोड़ देता क्योंकि शक्ति हीन शरीर मृत्पिण्ड सदृश ही होता है और सूर्य शक्ति (Energy) का कोष है। सूर्य की गर्मी वृक्षों और पौदों द्वारा कार्बन (Carbon) और आक्सिजन (Oxygen) को प्रथक् २ कर देती है। पौदे कार्बन पर अपना जीवन बिताते हैं और आक्सिजन मनुष्य, पशु और पक्षी आदि के लिये छोड़ देते हैं। यदि ऐसा न होता तो इन पिछली जातियों का नाम ही मिट जाता। सूर्य की गर्मी समुद्र के जल को भाप के रूप में आकाश पर ले जाती है। फिर वह भाप मेघ और बादल बनकर बरसता है या ओस के रूप में फिर पृथिवी पर आकर तप्त पृथिवी की प्यास को बुझाता है। वृक्षादि की उत्पत्ति और उनका पालन होता है, नदियों में बहकर मनुष्य और पशुओं को तरो ताज़ा बनाता है और फिर समुद्र में जा मिलता है।

आजकल जो मनुष्य कानें खोदकर पत्थर का कोयला निकालते हैं जिससे अंगीठियां गरम की जाती हैं और

अञ्जन आदि नाना प्रकार की कलें चलती हैं, विचार करने से पाया जाता है कि किसी समय में सूर्य की किरणों की गर्मी जंगलों में जमा होती रही। इन जंगलों पर समुद्र की लहरों ने मौजें मार कर उनको पत्थर बना दिया। इन्हीं किरणों की मोमयाई का नाम तो पत्थर का स्याह कोयला है। अंगीठियों के लोहे के झरनों में हो कर शीतकाल में जो आनन्ददायक और तेज-वर्द्धक प्रकाश हमारी आंखों तक पहुँचता है उस का कारण वही पुराने जंगलों में सञ्चित सूर्य की किरणे हैं। इन्हीं सूर्य की किरणों की सहायता से कानों के पर्दे फाड़ने वाली गड़गड़ाहट और धड़धड़ाहट वाले भारी अञ्जन, जिन के पहियों के नीचे पृथ्वी भी कम्पायमान हो जाती है, बड़े वेग के साथ इधर से उधर दौड़ते हुये नज़र आते हैं। बिजली से चलने वाली गाड़ी (Electric Cars) पृथ्वी पर हो अथवा आकाश में डाईनैमो (Dynamo) से बल प्राप्त करती है। किन्तु डाईनैमो में यह शक्ति और बल कहां से आया? यह उसी धुयें के अञ्जन (Steam Engine) से भरा जाता है जिस का आहार सूर्य की वही किरणें हैं जिन्हों ने भूतकाल में एकत्रित हो कर कोयले का रूप धारण कर लिया है। यह तो प्रत्यक्ष देखने में आता है कि बिजली की रोशनी और पंखा सूर्य के प्रकाश द्वारा ही चलते हैं। सारांश यह कि सभ्य संसार के जितने भी बड़े और भारी काम हैं वह सब सूर्य के ही सहारे चलते हैं।

रोटी जो मनुष्यजीवन का सहारा है गेहूं से बनती है, परन्तु गेहूं की उत्पत्ति का कारण सूर्य की गर्मी और वही जल है जिसको सूर्य की किरणों ने पृथ्वी से उठाया और आकाश से बरसाया। गेहूं चक्की द्वारा पिसता है। चाहे हवा चक्की

हो या 'पनचक्की' परन्तु हवा के चलने का कारण सूर्य है और जल और धुएं का कारण भी सूर्य है। गेहूं भी काट लिये, आटा भी पिस गया, किन्तु अभी तक रोटी पेट में नहीं पड़ी। आटा गूंधने को जल और रोटी पकाने को अग्नि चाहिये। इन दोनों का स्वामी सूर्य है। मनुष्य के रग और पट्ठों में इसी आहार से बल पैदा होता है और इस आहार में सूर्य की शक्ति भरी हुई है इस लिये मनुष्य का बल और शक्ति सब सूर्य के आधीन है। तात्पर्य्य यह कि हमारे जीवन का आधार केवल सूर्य ही है हमारे शरीर के पालन और वृद्धि की सामग्री की उत्पत्ति सूर्य है। हमारे शारीरिक बल का दाता सूर्य है। आनन्द सुख शान्ति स्वास्थ्य के सारे सामान अथवा तेज़ और ठंडी हवा के झोंके, हलकी फुआरों की वर्षा, यह सब सूर्य पर निर्भर है।

सूर्य जैसे अति उपयोगी की पूजा किसीतरह भी अनुचित नहीं कही जा सकती। जिसमें ईश्वर के बहुत से गुण घटते हों उसको ईश्वरतुल्य मान कर वा देवता जान कर उसकी उपासना करना मनुष्य का धर्म ही है।

हिन्दु ज्योतिष-शास्त्र के जानने वालों ने समय का अनुमान दो भिन्न २ रीतियों से किया है। एक तिथि और चन्द्रमास के हिसाब से तथा दूसरा सूर्यमास के हिसाब से। इतिहास बतलाता है कि प्राचीन काल में किसी समय भारतवर्ष में दो प्रसिद्ध राज-वंश थे। एक वंश वाले ज्योतिष सम्बन्धी समय की नाप-तोल सूर्यमास के हिसाब से करते थे और दूसरे चन्द्रमास के हिसाब से अर्थात् प्रथम वंश प्रायः १२ राशियों से काम लेता था और दूसरा वंश २७ नक्षत्रों से। १२ राशि सूर्य के १२ स्थान कहलाते हैं और २७ नक्षत्र चन्द्रमा के स्थान कहलाते हैं जिनको अंग्रेज़ी भाषा में ल्यूनर मैन्शन्स (Lunar

mansions) कहतेहैं। ज्योतिष शास्त्रकारों का ख़याल है कि इन वंशों केनाम सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी इसी कारण पड़े हैं। इस विषय के सम्बन्ध में हिन्दुओंका धार्म्मिक विचार जाननेके लिये वेद और मनुशास्त्र जैसे प्रमाणिक ग्रन्थ और पुराणों के देखने की आवश्यकता है परन्तु सुगम और सीधा मार्ग भारतवर्ष के वीर रस वाले दो प्रसिद्ध और विख्यात पद ग्रन्थ (Epic Poems) अर्थात् रामायण और महाभारत का अवलोकन है। रामायण में सूर्य वंश का वर्णन है और महाभारत में चन्द्रवंश का। पहिले वंश की राजधानी अयोध्या कही जाती है और दूसरे की इन्द्रप्रस्थ। पहिले वंश में प्रतिष्ठित पुरुष राम हुये जो रामायण के नायक और सूर्य कुल के दीपक हुये। दूसरे वंश में प्रतिष्ठित राजपुत्र कौरव व पाण्डव हुये जिन के परस्पर घोर युद्ध का नाम महाभारत रक्खा है और इस संग्राम में पाण्डवों अथवा चन्द्रकुल के दीपक पांच भाइयों की विजय हुई। रामायण और महाभारत का अधिकांश निर्णय हिन्दु इतिहास से होता है।

प्रश्न—सूर्य के १२ और चन्द्रमा के २७ स्थान कौन से हैं? क्या अन्य धर्म्मावलम्बी भी इन स्थानों को मानते हैं?

उत्तर—सूर्य के १२ स्थान वही हैं जिनको हिन्दु १२ राशि कहते हैं और अंग्रेज़ी में (Solar mansions) कहा है। फ़ारसीवाले इनको बुर्ज दवाज़दह अर्थात् द्वादश बुर्ज और चन्द्रमा के २७ स्थान वही हैं जिनको ज्योतिष शास्त्रवाले नक्षत्र कहते हैं और अंग्रेज़ी भाषामें जिनका नाम (Lunar mansions) है और जिनको फ़ारसी वाले मनाज़िल क़मर (Manazil Quamar) कहते हैं। वर्तमान ज्योतिष में सूर्य की १२ राशियों को (Twelve Signs of Zodiac) कहा है।

पृथ्वी पर रहने वाला कोई मनुष्य यदि अपने स्थान को केन्द्र मान कर आकाश को एक गोलाकार मण्डल मान ले (जिसकी परिधि जितनी बड़ी चाहे मानी जा सकती है) तो यह वही मण्डल होगा जिस को वर्तमान ज्योतिष (Modern Astronomy) में (Celestial Sphere) कहा है।

आकाश में रहनेवाले तारागण और ग्रहों (Planets) के स्थान अपने केन्द्र से किसी विशेष तारे तक एक सीधी रेखा खेंचने से नियत कर सकता है। किसी एक वस्तु का अन्तर दूसरी वस्तु से सम्बन्ध परक होता है। प्राचीन ज्योतिष शास्त्रकारों ने जो सूर्य के मार्ग चक्र (कल्पित) सम्बन्ध से ग्रहों और तारों के स्थान नियत किया करते थे रेखा अंतर (Longitude) को ३६० दर्जों के बराबर बराबर १२ भागों में विभाजित किया है और इन हिस्सों के नाम उन तारागणों के नाम * पर रखे हैं जो उस समय इन भागों में देखेगये।

---

* जो तारागण उस समय किसी एक भाग में पाये गये थे अब उनके स्थान बदले गये हैं परन्तु स्थानों के नाम वही चले आते हैं। उदाहरण के लिये आज कल मेष उस स्थान पर है जहां पहिले मीन था।

	Hindi	Persian	Latin	English
१	मेष	हमल	Aries	The Ram
२.	बृष	सौर	Taurus	,, Bull
३	मिथुन	जौज़	Gemini	,, Twin
४	कर्क	सरतान	Cancer	,, Crab
५	सिंह	असद	Lio	,, Lion
६	कन्या	सम्बुला	Virgo	,, Vergin
७	तुला	मीज़ान	Libra	,, Balance
८	वृश्चिक	अज़रब	Scorpio	The Scorpion
९	धनु	क़ौस	Sagittarius	,, Archer
१०	मकर	जदी	Capricornus	,, Goat
११	कुम्भ	दल्व	Aquarius	,, Water Bearer
१२	मीन	हूत	Pisces	,, Fishes

फ़ारसी वाले इन १२ बुर्जों को मनाज़िल्-उल्-शम्श (Man-azil-ul-shamsha) भी कहते हैं।

२७ नक्षत्र अथवा (Lunar mansions) वही चांद के स्थान हैं जिनको फ़ारसी वाले मनाज़िल्-उल्-क़मर कहते हैं। चांद के मार्गचक्र को २७ बराबर २ भागों में बांटा है। प्रत्येक भाग का नाम नक्षत्र है। क्योंकि चन्द्रमा लगभग २७⅓ दिन में पृथिवी के चारों ओर एक चक्र पूरा कर लेता है इस लिये उसके मार्ग चक्र को २७ बराबर के भागों में बांटा है।

अपने अधिष्ठातृ देवता सहित २७ नक्षत्र यह हैं।

नक्षत्र (भाषा में)	देवता	अरबीनाम	
१- अश्विनी	अश्विनी	अल्-शिरात	(Al Sheratan)
२- भरणी	यम	अल्-बतून	(Al Batun)

३.	कृत्तिका	अग्नि	अल-थुराइया	(Al Thuraiya)
४.	रोहिणी	प्रजापति	अल्-देबरां	(Al Debaran)
५.	मृगशिरा	सोम	अल्-हिकाह	(Al Hokah)
६.	आर्द्रा	रुद्र	अल्-हिनाह	(Al Henah)
७.	पुनर्वसु	अदिति	अल्- दिरा	(Al Dira)
८.	पुष्य	बृहस्पति	अल्-नेथरा	(Al Nethra)
९.	अश्लेषा	सर्पः	अल्-तर्फ़ी	(Al Terpha)
१०.	मघा	पितरः	अल्-जीभा	(Al Giebha)
११.	पूर्वा फाल्गुणी	भग	अल्-ज़बरा	(Al Zubra)
१२.	उत्तरा फाल्गुणी	अर्यमन्	अल्-सरफ़ा	(AlSerpha)
१३.	हस्त	सावित्री	अल्-आवा	(Al Anwa)
१४.	चित्र	त्वष्ट्री	सिनक- अल्-अज़ल	(Sinak Al Azal)
१५.	स्वाति	वायु	अल्-ग़फ़र	(Al Gapher)
१६.	विशाषा	इन्द्राग्नि	अल्-ज़बां	Al Zubana)
१७.	अनुराधा	मित्र	आ-इस्लिल्	(An Icilil)
१८.	ज्येष्ठा	इंद्र	अल्-क़ल्ब	(Al Kalb)
१९.	मूल	निऋति	अल्-शल्	(Al Shaula)
२०.	पूर्वाषाढ़	अपः	अल्-नइम	(Al Naaim)
२१.	उत्तरा षाढ़	विश्वादेवाब्रह्मा	अल्-बदल	(Al Bedal)
२२.	श्रावण	विष्णु	अल्-दबीह	(Al Dabih)
२३.	सविष्ठा धनिष्ठा	वसव	साद्उल्-बला	(Sad Al Bula)
२४.	सद्भिषज्	वरुण	अल्-सन्द	(Al Sund)

२५.	पूर्वा भाद्रपद	अज एकपात्
२६.	उत्तरा भाद्रपद	अहिर्बुध्न्य
२७.	रेवती	पूषन्
२८.	अभिजित्	......

प्रश्न–जब यह दोनों घेरे (Circles) जो १२ और २७ भागों में बांटे गये हैं एक ही आकाशमण्डल (Celestial sphere) पर बनते हैं तो उन में अवश्य कुछ सम्बन्ध होगा और इन में सम्बन्ध होने के कारण १२ राशियों और २७ नक्षत्रों में भी सम्बन्ध होगा। यदि ऐसा है तो वह सम्बन्ध (Relation) क्या है ?

उत्तर–हिसाब से २। नक्षत्र का एक महीना होता है। अर्थात् एक राशि में २। नक्षत्र आवेंगे और क्योंकि हिन्दु वर्ष वैशाख से आरम्भ होता है और चांद का महीना अश्विनी नक्षत्र से इसलिये जिस सम्बन्ध को तुम जानना चाहते हो वह नीचे लिखे अनुसार हैः–

राशि	मास	नक्षत्र
मेष	वैशाख	अश्विनी, भरणी, $\frac{1}{4}$ कृतिका
वृष	ज्येष्ठ	$\frac{3}{4}$ कृतिका, रोहिणी, $\frac{1}{2}$ मृगशिरा
मिथुन	आषाढ़	$\frac{1}{2}$ मृगशिरा, आर्द्रा, $\frac{3}{4}$ पुनर्वसु
कर्क	श्रावण	$\frac{1}{4}$ पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा
सिंह	भाद्रपद	मघा, पूर्वाफाल्गुनी $\frac{1}{4}$ उत्तराफाल्गुनी
कन्या	आश्विन	$\frac{3}{4}$ उत्तरा फाल्गुण, हस्त, $\frac{1}{2}$ चित्रा
तुला	कार्तिक	$\frac{1}{2}$ चित्रा, स्वाति, $\frac{3}{4}$ विशाषा
वृश्चिक	मार्गशिर	$\frac{1}{4}$ विशाषा, अनुराधा, ज्येष्ठा
धन	पौष	मूल, पूर्वाषाढ़, $\frac{1}{4}$ उत्तराषाढ़

मकर	माघ	३/४ उत्तराषाढ़, श्रवण, १/२ धनिष्ठा
कुम्भ	फाल्गुन	१/२ धनिष्ठा,सद्भिषज् ३/४ पूर्वाभाद्रपद
मीन	चैत्र	१/४ पूर्वाभाद्रपद,उत्तराभाद्रपद,रेवती

प्रश्न–क्या कारण है कि अरब देश वालों ने २८ नक्षत्र माने हैं और वर्तमान रीति के अनुसार हिन्दुओं ने २७ ही ?

उत्तर–आदि में एशिया की सब जातियों ने २८ नक्षत्र माने अर्थात् भारतवर्ष, चीन और अरब, और इनके साथ २ मिस्र (Egypt) ने २८ नक्षत्र क़ायम किये, किन्तु बाद में हिन्दुओं ने २७ नक्षत्र स्थिर किये और एक नक्षत्र जिसका नाम अभिजित् था छोड़ दिया। इस संशोधन का कारण यह है कि चांद २७ १/३ दिन में अपना चक्र पूरा कर लेता है और नक्षत्रों की संख्या पूरी २ होनी चाहिये वहां भाग अथवा कसर (Fraction) का काम नहीं इसलिये सब जातियों ने २८ नक्षत्र क़ायम किये। परन्तु ज्योतिष सम्बन्धी गणित का शोध करते हुये हिन्दुओं ने विचार किया कि २८ की अपेक्षा में २७ संख्या, २७ १/३ के अधिक निकट है इसलिये इस जाति ने २/३ भाग जोड़ने की अपेक्षा १/३ का छोड़ना उचित समझा और अभिजित् नक्षत्र को छोड़ दिया। जिन जातियों ने ज्योतिष सम्बन्धी गणित में कोई शोध तथा परिवर्त्तन नहीं किया है उन जातियों में अभी तक २८ नक्षत्र चले आते हैं। प्रत्येक नक्षत्र में हिन्दू ज्योतिष के अनुसार चन्द्रदेव का निवास १ दिन १८ मिनट होता है और अरब देश वालों ने हर एक मंज़िल (विभाग) में चांद की सकूनत या क़याम २३ घण्टे २६ मिनट का रखा है।

प्रश्न–क्या कारण है कि बारह राशियों के नाम विशेषकर जानवरों के नामों पर हैं ? अंग्रेज़ी, अरबी, और हिन्दी नाम

एक दूसरे से मिलते-जुलते पाये जाते हैं। इस का भी कोई कारण होगा ?

उत्तर–इस प्रश्न का उत्तर ऐतिहासिककाल के पूर्व समयसे सम्बन्ध रखताहै। महाद्वीप एशिया (Asiatic Continent) के उस मण्डल (Zone) में जिस के एक ओर एशिया माइनर और अफ्रीका है और दूसरी ओर पैसिफ़िक ओशन (Pacific ocean) है—पृथिवी के बड़े विस्तृत देश स्थित हैं और यह देश बड़े उपजाऊ और कृषि के लिये बहुत उपयोगी हैं तथा सिंचाई के लिये जल की बहुतायत है। इन में से किसी २ में लोग बहुत काल से रहते हैं अथवा बड़े २ और अच्छे २ पक्के मकान बना लिये हैं और कृषि करते हैं और किसी २ भ्रमण अथवा देशाटन करने वाली जातियां जो डेरे और झोंपड़ों में अपना निर्वाह करती हैं) पाई गई हैं। यह जातियां अपना धन अर्थात् पशुओं को साथ २ लिये इधर से उधर इस खोज में घूमती रहती हैं कि कहीं उनको चराने का अच्छा जङ्गल मिल जाय। ऐतिहासिक काल में तो ऐसे देश बड़ी भयानक घटनाओं के क्षेत्र बनते चले आये हैं। इतिहास बतलाता है कि एसीरियन्स, मीड्स और परशियन्स जैसे बड़े २ राज्य रणभूमि में जूझे हैं। यदि आज एक उन्नतावस्था में है, फलता है और फूलता है तो कल उसका नाम निशान मिट जाता है और उसकी जगह दूसरा अपनी सत्ता जमा लेता है। ठहरता यह भी नहीं। कल इसकी बारी उतर जाती है और तीसरे का झण्डा ग्रढ़ जाता है। सुलह और शान्ति के समय में यह लोग उद्यम करते हैं। फलते हैं और फूलते हैं। सभ्यता प्राप्त करते हैं विद्या कलायें और शास्त्रादि की उन्नति होती है किन्तु आन की आन में कोई दूसरी जाति चढ़

आतीहै। तबाही और बरबादी की लहर फैलाकर पहिली जाति को नष्ट कर देती है किन्तु यह नाश करने वाली जाति भी स्थिर नहीं रहती। इस की वही दशा होती है कोई तीसरी जाति आकर इस का गला दबोच लेती है।

ऐतिहासिक समय की इन घटनाओं को देख कर ऐसा अनुमान करना अनुचित न होगा अपितु उचित होगा कि ऐतिहासिक काल से पूर्व समय में भी ऐसी ही घटनायें होती रही हों और जब उन देशों के परिवर्त्तन का समय आया तो जो देश सभ्यता के केन्द्र बने हुए थे आपत्ति के समय में वहाँ के पण्डित विद्वान् और गुणी-जन अपनी विद्या साथ लिये हुये उन देशों से भाग कर देशाटन करने वाली जातियों में जा मिले और अपनी विद्या के बल द्वारा उनके नेता बन गये। ऐसे देशान्तर-गमन (Migration) के सम्बन्ध में काफ़ी साक्षी मिलती है। प्राचीन इतिहासकारों की सम्मति इस प्रकार है :—

"एशियाटिक सोसायटी (Asiatic Society) कलकत्ते के अधिवेशन सन् १७६२ में सर विलियम जोन्स (Sir W. Jones) ने निर्णय किया कि परशियन्स (Persians), इन्डियन्स (Indians), रोमन्स (Romans), ग्रीक्स (Greaks), गौथ्स (Goths), इजिप्शियन्स (Egyptians) सबकी सब जातियां किसी समय एक ही भाषा बोलती थीं और एक ही धर्म का पालन करती थीं।

शनैः शनैः यह विश्वास दृढ़ होता गया। उन पौर्वात्य तत्ववेत्ता (ओरियन्टल स्कालर्स) की खोज का परिणाम जो पृथिवी पर बसने वाली भिन्न २ जातियों की भाषा, धर्म, मत-मतान्तर, रीति-रिवाज़, उद्यम वाणिज्य और पौराणिक

शास्त्र की तुलना कर रहे थे यह हुआ कि उनको दृढ़ विश्वास हो गया कि संस्कृत, ज़ेंद (Zend) और यूरोप की भाषाओं का परस्पर सम्बन्ध है और जो प्रत्यक्ष अन्तर नज़र आता है उसका कारण उन जातियों से गैलमेल है जो मध्य एशिया से भाग कर अन्य देशों में बसीं।

मध्य एशिया से भ्रमण करने वाली जातियाँ केवल दक्षिण की ओर नहीं किन्तु पूर्व व पश्चिम की ओर भी आईं। इन सब भ्रमण करने वाली जातियों का केवल मत ही एक न था किन्तु सप्ताह के दिनों के नाम भी एक से ही हैं। सूर्य मार्ग (Ecliptic) को सब ही ने १२ भागों में बाँटा है और इन १२ भागों का १२ महीनों से सम्बन्ध है। इन जातियों में जो विशेष बुद्धि वाले मनुष्य थे उन्होंने इस चक्र (Ecliptic) को २८ हिस्सों में भी बांटा है और इस चक्र को चन्द्र-मार्ग मान कर हर एक हिस्से में चन्द्रमा को एक दिन ठहराया है क्योंकि चन्द्रमा २८ दिन में १ चक्र पूरा कर लेता है। यह रीति पूर्वीय देशों में विशेष कर पाई जाती है। हिन्दू लोग इनको नक्षत्र कहते हैं चीनवाले सिउ (Sieu) और परशियन्स (Persians) इन को मनाज़िलउल् क़मर कहते हैं। पश्चिमीय देश में इस दूसरे प्रकार की विभाग शैली का प्रचार बहुत कम है। मिश्र वालों ने इस विभाग रीति को बहुत दिनों बाद माना परन्तु कुछ लाभ नहीं उठाया। हिन्दू ज्योतिषियों (Astronomers) ने ज्योतिष शास्त्र की उन्नति करते हुए इस विभाग रीति को अच्छा समझा और नक्षत्रों से बड़ा काम लिया और प्राचीन जातियों में इनका मान भी बढ़ गया। आजकल जो पश्चिमीय देशों के ज्योतिष और हिन्दू ज्योतिष में अन्तर दिखाई देता है उसका कारण नक्षत्रों का मानना और न मानना है।

यह निश्चय हो चुका है कि सूर्यचक्र (Ecliptic) को १२ भागों में बांटने की रीति इतिहास के आदि से चली आती है। यूनानी, मिश्री, पारसी, हिन्दू, चीनी आदि ने जो इन १२ राशियों को सूरत व शक्ल दी हैं वह सब मिलती जुलती पाई जाती हैं। ऐसा विचार करना उचित तथा ठीक ही होगा कि आकाश-मण्डल (Celestial sphere) और राशिचक्र (Solar Zodiac) का ध्यान इन सब जातियों को उस समय था जब इन्होंने मध्य एशिया को छोड़ा। एशिया से भ्रमण करने वाली जातियां जो रात्रि में अपने जानवरों की देख भाल करती थीं उनको (Sidereal sphere) साइडारियल स्फीयर देखने का बहुत अवकाश मिलता था। जो तारे कल रात्रि को पूर्व से उठते हुए दिखाई दिये थे वह आज भी उसी दिशा से उठते हुए नज़र आये, केवल इतना भेद रहा कि पहली रात्रि की अपेक्षा दूसरी रात्रि को जल्द छिप गये इन जातिओं के लोग बाल्यावस्था से वृद्धावस्था तक इन तारों को देखते रहे तो अवश्य तारों की शक्ल व सूरत का ध्यान इनको हो गया होगा और उन तारों के नाम रखने की इच्छा भी उनके मन में अवश्य उत्पन्न हुई होगी। यह बात स्वाभाविक है कि मनुष्य वही नाम रख सकता है जो उसकी ज़बान पर चढ़ रहे हों या जिनका उसको ध्यान रहता हो।

यह भ्रमण करने वाली जातियां (Nomadic Races) गाय, भैंस, भेड़, बकरी, शेर, चीते, सांप, बिच्छू, हरिण आदि को अच्छी तरह जानते थे और इन्हीं का ध्यान रहता था। बस १२ राशियों के नाम इन्हीं जानवरों के नाम पर रख दिये। भेड़, बकरी, बैल, भैंस आदि तो साथ ही रहते थे। और कर्क, मीन, वृश्चिक आदि नदी व झीलों में दिखाई देते

थे। क्वारी लड़कियां खेत काटती और चिल्ला बीनती नज़र आती थीं। धनुष बाण वाला मवेशियों को शेर से बचाता है भिश्ती मवेशियों को पानी पिलाता है। तराज़ू का अर्थ तुलना करना है। दिन रात बराबर होने के समय जो भाग दिखाई देता था उसका नाम तुला से अच्छा और क्या हो सकता है।

इस खोज से यह परिणाम निकलता है कि राशियों के नाम दाता मध्य एशिया के वह लोग हैं जिनके भ्रमण करने के समय को बतलाने के लिये इतिहास का भी मुँह बन्द है।

प्रश्न—यूनान वालों का इन १२ राशियों के नाम के संबन्ध में क्या विचार है क्या उनका यह दावा सच्चा है कि राशियों के नाम उन्हींने रखे ?

उत्तर—राशियों का नाम रखने वाले का पता उपरोक्त लेख से लगता है। यूनान वालों का अपनी टांग अड़ाना वृथा है। एक इतिहासकार ने तो स्पष्ट कहा है कि यह नाम मिश्र वालों ने रखे। यूनान के पौराणिक शास्त्र में उनका वर्णन होना इस बात का प्रमाण नहीं कि नाम उनके रखे हुवे हैं। पौराणिक शास्त्र तो प्रत्येक जाति का अलग २ है। मेष (Ram) मिश्र की उस देवी का वाहन है जो आकाश के ऊपर के भाग की मालिक है। इसलिये इस देवी को मेष का स्थान दिया गया है।

कर्क (Cancer) उस केकड़े का नाम बतलाते हैं जिसने हरकुलीज़ (Hercules) के पैर में इसलिये काटा था कि वह हाईड्रा (Hydra) राक्षसी को मार न सके, परन्तु हरकुलीज़ ने उस राक्षसी को मार लिया—जूनो ने प्रसन्न होकर हरकुलीज़ को उच्च पद देना चाहा। इस कारण कर्क का स्थान इसे दिया गया।

मकर (Capricorn) यूनान के पैन (Pan) नामी देवता का नाम है जिस ने टाईफन (Typhon) नामी बलवान दानव के भय से अपना ऊपर का आधा भाग बकरे का और नीचे का आधा भाग मछली का बना लिया। इस भयंकर सूरत को देखकर ज्युपिटर (वृहस्पति) महाराज डर गये और उसको देश निकाला देने के लिये आकाश को भेज दिया। यूनानी पौराणिक शास्त्र पैन (Pan) देवता का ऊपर का धड़ आदमी का और नीचे का बकरे का बतलाता है।

मिथुन (Gemini) इस राशि का आकार दो जोड़िया भाइयों का बतलाया जाता है जिनके नाम कैस्टर (Caster) व पालक्स (Pallux) हैं।

वृश्चिक (Scorpio) यूनान में ओरायन (Orion) नाम का एक प्रसिद्ध शक्तिशाली मनुष्य था। वृश्चिक से इस का युद्ध हुआ। युद्ध में विजय पाने पर ज्युपिटर महाराज ने प्रसन्न होकर आकाश पद दे दिया। ज्योतिष शास्त्र में ओरा-यन एक प्रसिद्ध तारों का समूह है जो वृश्चिक राशि के सामने देखा जाता है।

मीन (Pisces) यह वह मछलियां बयान की जाती हैं जिन्होंने काम और रति अथवा क्यूपिड (Cupid) और वीनस (Venus) को अपनी पीठ पर सवार करके टाइफन दानव से बचाया था जिस के कारण उसे आकाश में स्थान मिला।

शेष राशियों के सम्बन्ध में भी यूनानी पौराणिक शास्त्र में इसी प्रकार की विचित्र कहानियां पाई जाती हैं।

प्रश्न-अंग्रेज़ी में नक्षत्रों के दो नाम बतलाये हैं Lunar Mansions & Lunar Asterisms क्या इन दोनों शब्दों में कुछ भेद है ? यदि है तो क्या ?

उत्तर-शब्दार्थ तो भिन्न २ है। पहले से अभिप्राय सूर्य-चक्र के २८ भागों से है और दूसरे से अभिप्राय उन तारागण से है जो सूर्य-चक्र (Ecliptic) के २८ भागों के सामने दिखाई देते हैं। प्रत्येक तारागण में बहुत से तारे पाये जाते हैं। चांद का स्थान प्रकट करने के लिये किसी समूह के भी सारे तारों का नाम नहीं लिया जाता; समूह में से केवल एक ऐसा चमकदार तारा छांट लिया गया है जो Ecliptic के अति समीप है और इसी तारे के नाम से वह स्थान अथवा नक्षत्र या तारों का समूह प्रकट किया जाता है। इस तारे को "योग-तारा" कहते हैं।

भारतवर्षीय आकाश अवलोकन करने वालों के लिये योग तारे आकाश की सड़क पर गड़े हुए ऐसे ही उपयोगी हैं जैसे पृथिवी की सड़क पर मीलों के पत्थर।

प्रश्न-हिन्दू ज्योतिष शास्त्र में कई प्रकार के काल-चक्र माने गये हैं जिनको युग भी कहते हैं। इन में से जिसको सम्बन्ध ग्रहण से है वह कैसे नियत किया गया ?

उत्तर-ग्रहण सम्बन्धी कालचक्र जिसको यूरोप वाले चैलडियन साइकिल (Chaldian's Cycle) कहते हैं की अवधि ६'१८५'७८ अथवा लगभग ६५८६ दिन की बांधी है जो १८ वर्ष और १०-११ दिन * के बराबर होती है।

इस अवधि का अर्थ यह है कि जब कभी सूर्य चांद और पृथिवी एक ही सीधी रेखा में हों तो ग्रहण अवश्य होगा और यही ग्रहण ६५८६ दिन के अन्तर पर फिर होगा।

---

* १० या ११ कहने का अर्थ यह है कि यदि इन १८ साल में ५ लीपियर होंगे तो १० दिन लिये जायेंगे और चार लीपियर होंगे तो ११।

यदि किसी एक युग के ग्रहणों की सूची बनाली जावे तो उस से अगले और पिछले युगों की अथवा सैंकड़ों वर्ष के ग्रहणों की आसानी से तैयार हो सकती है। बीसवीं शताब्दी के ग्रहणों की सूची निम्न प्रकार है।

चांद के नोड की वक्र गति इस हिसाब से आकर पड़ती है कि वह चांद के मार्ग-चक्र पर प्रति दिन ३$\frac{१}{६}$ मिनट (जो १ दर्जे का ६० वां हिस्सा है) चलता है जो लगभग १ दर्जे का १६ वाँ भाग है। इस हिसाब से ६८४१ दिन होते हैं परन्तु ज्योतिष की गणना सूर्य के औसत दिन (Mean Solar Day) के हिसाब से होती है। इस रीति से लगभग ६८०० दिन पाये जाते हैं और सूर्य-सिद्धांत में ६७९४-४४ दिन बतलाये गये हैं और वर्त्तमान ज्योतिष की रीति से ६७९३·३९ दिन होते हैं।

प्रश्न—वर्ष, मास, दिवस कालचक्र को तो सब ही जातियाँ मानती हैं यद्यपि इन की नाप तौल में भेद है परन्तु हिन्दुओं ने तो बड़े २ कालचक्र माने हैं जैसे कृतयुग त्रेता, द्वापर, कलियुग। इस का क्या कारण है कि दूसरी जातियों के ज्योतिष ग्रन्थों में ऐसे कालचक्रों का कोई उल्लेख नहीं ?

उत्तर—हिन्दू ज्योतिषियों को ऐसे समय के जाननेकी आवश्यकता हुई कि आकाश में भ्रमण करने वाले किसी ग्रह का चक्र कब आरम्भ हुआ। फ्रांस का प्रसिद्ध माननीय ज्योतिषी लैप्लास (Laplace) जिसने विख्यात ग्रन्थ 'आकाश-यन्त्र-विद्या' (Mechanique Celestiœ) की रचना की है ऐसा विचार प्रकट करता है कि १२ राशियों में भ्रमण करने वाले सय्यारों का गतिचक्र कलियुग के आदि (३१०२ बी. सी.) में प्रारम्भ हुआ, किन्तु हिन्दू ज्योतिषियों के विचारानुसार

सूर्य चांद और अन्य ग्रह एक ही समय पृथिवी के एक ही ओर एक ही सीधी रेखा में (In-Conjunction) नहीं होते। कलियुग का आदि तो इन में से किसी एक का सूर्य और चन्द्रमा के साथ एक ओर होना है। जब कोई दूसरी ग्रह (Conjunction) में होगी तो कोई दूसरा युग आरम्भ होगा और तीसरी ग्रह के (Conjunction) में होने से तीसरा युग, इसी तरह प्रत्येक ग्रह के कनजङ्कशन होने से एक नया युग होगा और दो ग्रहों का एक साथ सूर्य और चन्द्रमा के साथ Conjunction) में होने से कोई और ही बड़ा युग बनेगा। और तीन ग्रहों के एक साथ (Conjunction) में होने से इस से भी बड़ा युग होगा। इसी प्रकार ग्रहों की संख्या के साथ युग बढ़ता जायेगा। बस यदि सूर्य और चन्द्रमा के साथ प्रत्येक ग्रह और दो दो और चार चार ग्रहों के एक साथ संयोग (Combinations) पर ध्यान दिया जाये तो बहुत से युग पैदा हो जाते हैं। इसी रीति से यदि विचार करते चले जायें तो किसी ऐसे युग की भी सम्भावना होती है जिस में यह सब युग समा सकें। यह युग अवश्य सब से बड़ा होगा। इस युग का आदि वही होगा जिस समय कि सब ग्रहों ने सूर्य और चन्द्रमा के साथ (Conjunction) में हो कर अपनी यात्रा प्रारम्भ की। किसी किसी का ऐसा विचार हो सकता है कि इस युग का आदि सृष्टि का आदि है किन्तु यह विचार शास्त्रोक्त नहीं हो सकता क्योंकि सब ग्रह एक साथ ही उत्पन्न नहीं हुईं। समय २ पर उत्पन्न होती रही हैं और अनेक नष्ट हो चुकी हैं जैसा कि आगे चलकर सय्यारो, तारों आदि की उत्पत्ति के वर्णन से विदित होगा। जिन हिन्दू ज्योतिषियों ने इस बड़े

युग को सृष्टि का आदि माना है वह इस युग को महायुग कहते हैं और जिस की अवधि ४३२०००० है, और इस महायुग के चार भाग बतलाये जाते हैं। पहला कृतयुग अथवा सतयुग १७२८००० वर्ष का। दूसरा त्रेतायुग १२९६००० वर्ष का। तीसरा द्वापर ८६४००० वर्ष का। और चौथा कलि-युग ४३२००० वर्ष का।

इस महा-युग से बड़ा कल्प माना है जिस को ब्रह्मा का एक दिन कहा है। एक कल्प सहस्र महायुगों का माना गया है। अन्य जातियों ने दिवस, मास और वर्ष के अनन्तर छोटे २ युग माने हैं जैसे ग्रहण का युग अथवा पृथ्वी के साथ सूर्य और चन्द्रमा के Conjunction पर ही सन्तोष कर लिया। और ग्रहों के साथ Conjunction पर ध्यान देना आवश्यक नहीं समझा क्योंकि व्यवहार में सूर्य, चांद और पृथिवी से ही विशेष काम पड़ता है।

हिन्दुओं ने सितारों और सय्यारों को ही देवता नहीं माना किन्तु काल को भी देवता का रूप दिया है। कल्प पर सन्तोष न कर के महा-कल्प भी मान लिया काल को महाबली कहते ही हैं। बस, महा काल के स्वामी अर्थात् देवता का नाम महादेव रख दिया और क्योंकि वर्ष काल का एक अंग है और हिन्दुओं ने स्त्री को पुरुष का अर्धाङ्ग माना है। इसलिये दुर्गा को जो महादेव की स्त्री मानी जाती है वर्ष की देवी मान लिया और महाकाली नाम रख लिया।

निरक्षर भट्टाचार्य्यों ने तो शिवजी का रंग भी काला बना दिया और साथ २ दुर्गा को काली कह कर उसका रङ्ग भी काला कर दिया।

प्रश्न-क्या वर्ष, मास और दिवस सब जातियों ने और सब देशों ने एक से ही माने हैं ?

उत्तर-दिन की लम्बाई तो सब जगह एक सी ही मानी जाती है परन्तु मास और वर्ष की गणना भिन्न २ है। मास कई प्रकार के माने जाते हैं और वर्ष भी कई प्रकार के हैं। इस भेद का कारण यह है कि कोई चन्द्रमास मानता है और कोई सूर्यमास। इसी प्रकार वर्ष की गणना में भी भेद है।

प्रश्न-अंग्रेजी साल ३६५ दिन का माना जाता है परन्तु चौथा साल ३६६ दिन का मानते हैं अर्थात् ३ साल बराबर फ़र्वरी २८ दिन का गिना जाता है और चौथे साल २६ दिन का। इसका क्या कारण है ?

उत्तर-पश्चिमीय देशों में ज्योतिष का वर्ष Astronimical year जिस को ऋतु सम्बन्धी वर्ष (Tropical year कहते हैं। ३६५·२४२२१६ अर्थात् ३६५ दिन ५ घण्टे ४८ मिनट ४८ सेकंड का होता है। व्यवहारिक दुनिया की सुगमता के लिये पूरे दिनों का वर्ष होना चाहिये। और ज्योतिष के वर्ष की बराबर भी होना चाहिये इस कारण पश्चिमीय देश वालों ने व्यवहारिक वर्ष (Civil year) ३६५¼ दिन का मान कर ईसवी सम्वत् से ४४ वर्ष पूर्व अथवा जूलियस सीज़र के राज्य काल में यह प्रबन्ध किया गया कि ३ साल ३६५ दिन के माने जावें और चौथा साल ३६६ दिन का। क्योंकि व्यवहारी दुनिया इस बात को पसन्द नहीं करती कि किसी दिन का एक भाग तो एक साल में लिया जावे और शेष भाग दूसरे साल में। इस कारण चौथे साल फर्वरी २६ दिन का माना जाता है। इस परिवर्त्तन का नाम जूलियन

करक्शन है और इस रीति पर बने हुये पञ्चाङ्ग जूलियन कैलेण्डर (Julian Calendar) कहलाते हैं।

प्रश्न–इस प्रबन्ध से भी व्यवहारिक वर्ष ज्योतिष के वर्ष की बराबर नहीं होता। प्रति वर्ष ११ मिनट १२½ सेकंड का अंतर होता है। इस भेद के मिटाने का भी कोई प्रबन्ध किया गया है अथवा नहीं ?

उत्तर–ज्यूलियस सीज़र की मृत्यु के पश्चात् सन् १५८२ तक यही प्रबन्ध प्रचलित रहा किंतु सन् १५८० में यह विचार उत्पन्न हुआ कि इस अंतर के कारण ४०० वर्ष में ३ दिन का अंतर पड़ जायेगा अर्थात् ४०० वर्ष में व्यवहारिक वर्ष ज्योतिष वर्ष से ३ दिन आगे निकल जायेगा और क्योंकि उस समय तक ११ दिन का अन्तर पड़ चुका था, पस पोप ग्रेगरी (Pope Gregory) के राज्य काल में यह परिवर्त्तन किया गया कि जन्त्री में से ११ दिन उड़ा दिये और तीसरी अक्टूबर से अगला दिन १५ अक्टूबर माना गया और भविष्य के लिये यह प्रबन्ध कर दिया गया कि तीन शताब्दी का अंतिम वर्ष जो पूरे ४०० से विभाजित न हो सके ३६५ दिन का रहे और चौथी शताब्दी जो ४०० से पूरी विभाजित हो जाये उसका अन्तिम वर्ष ३६६ दिन का माना जाय। इस रीति से जो ४०० वर्ष में ३ दिन बढ़ते थे कम हो गये।

यह परिवर्त्तन 'ग्रेगोरियन परिवर्त्तन' के नाम से प्रसिद्ध है। सन् १७५२ में इङ्गलैण्ड ने भी इस नवीन रीति को स्वीकार कर लिया और माह सितम्बर में १२ दिन न्यून कर दिये गये अर्थात् दूसरी सितम्बर से अगला दिन १५ सितम्बर माना गया। अब लगभग सब ही पश्चिमीय देशों ने इस रीति को स्वीकार करलिया है।

अभी १ जनवरी सन् १९२६ ई० से मुस्तफ़ा कमाल पाशा के शासन काल में टर्की देश ने भी इस्लामिया वर्ष को त्याग कर परिवर्त्तित जूलियन वर्ष अर्थात् ग्रेगोरियन वर्ष को स्वीकार कर लिया है।

प्रश्न–हिन्दू ज्योतिषियों ने तीसरे वर्ष लौंद का महीना (Intercallary Month) क्यों रक्खा है? तिथि तो घटती और बढ़ती हैं क्या कभी कोई महीना भी घट जाता है? यदि ऐसा होता है तो क्यों? और घटने बढ़ने का क्या नियम है?

उत्तर–अंग्रेज़ी वर्ष में जो चौथे साल एक दिन जोड़ा जाता है उसका नाम Intercallary-day है अर्थात् लौंद का दिन वा अधिक दिन। जिस प्रकार अधिक दिन का सम्बन्ध अंग्रेज़ी सिविल-इयर अर्थात् व्यवहारिक वर्ष से है ऐसे ही 'अधिक-मास' का सम्बन्ध हिन्दू-ज्योतिष के साल से है। यह जानना चाहिये कि हिन्दू ज्योतिष के साल का विस्तार कितना है। वर्त्तमान-ज्योतिष (Modern-Astronomy) के हिसाब से प्रत्येक सौर्य-वर्ष (Solar-Year) ३६५.२४२२४१ दिन का माना जाता है परन्तु सूर्य-सिद्धान्त में Solar-Year ३६५.२५८७५ दिन का माना है अर्थात् लगभग १ घण्टा बड़ा माना गया है। इस अन्तर का कारण यह है कि वर्त्तमान ज्योतिष का साल ऋतु से सम्बन्धित (Tropical Year) है और हिन्दू ज्योतिषका साल ऋतुसे सम्बन्ध नहीं रखता किन्तु वह वर्ष है जिसका नाम वर्त्तमान ज्योतिष ने ऐनोमेलैस्टिक इयर (Anomalastic-Year) रक्खा है और जिसकी अवधि ३६५.२५९५४४ दिन की बांधी है। इस के अनन्तर वर्त्तमान ज्योतिष ने एक और साल माना है जिसको साइडीरियल इयर

(Sidereal-Year) कहते हैं और जिसका विस्तार ३६५. २५६३७४ दिन है।

जितने समय में पृथिवी सूर्य के चारों ओर घूम जाती है अर्थात् अपने मार्ग-चक्र पर किसी नियत स्थान से चल कर फिर उसी स्थान पर आ जाती है उसको साधारण रीति से वर्ष कहते हैं। यदि नियत स्थान कोई तारा है अथवा तारागणोंमें कोई विशेष स्थान है तो चक्र समयका नाम Sidereal-Year होता है। यदि मेष राशि का आदि नियत स्थान है तो चक्र समय का नाम ट्रापीकल ईयर (Tropical Year) होता है। तुम को यह स्मरण होगा कि मेष राशि का आदि स्थान वक्र-गति (Retrograde Motion) होकर वर्ष भर में २५-२२ संकण्ड अर्थात् १ दर्जे का ७२ वां भाग पृथ्वी के प्रतिकूल चलता है। यही कारण है कि चक्र शीघ्र समाप्त हो जाता है और Sidereal Year की अपेक्षा में Tropical Year छोटा होता है।

यदि नियत स्थान पृथिवी के मार्ग-चक्र पर वह स्थान माना जाय जिस स्थान पर पृथिवी सूर्य के अति समीप होती है तो वर्ष का नाम Anomalastic Year होता है। इस स्थान पर पृथिवी ३१ दिसम्बर को पहुँचती है और यह स्थान प्रति वर्ष ११$\frac{3}{7}$ संकण्ड अर्थात् १ दर्जे का ३२० वाँ भाग उसी ओर को चलता है जिधर को पृथिवी चलती है और इस कारण से यह वर्ष पहले दो वर्षों से बड़ा होता है।

चाँद के महीने का हिसाब समझने के लिये एक और बात स्मरण रखने की आवश्यकता है। वह यह कि वास्तव में हिन्दुओं का वर्ष न सौर्यवर्ष (Solar Year) है न चन्द्र वर्ष (Lunar Year) ही है परन्तु चान्द्र-सौर्य-वर्ष अर्थात्

Luni-Solar Year है। हिन्दु ज्योतिषियों ने पञ्चाङ्ग बनाने में चन्द्र और सूर्य दोनों की गति से काम लिया है अर्थात् चन्द्र-मास और सूर्य-मास दोनों से काम पड़ता है। चन्द्र-मास (Synodical Month) २६.५३ दिन का होता है जैसा कि ऊपर लिखा है और सूर्य मास कोई २६ दिन का कोई ३० दिन का और कोई ३१ दिन का होता है। चन्द्रमास के नाम भी सूर्यमास के नाम पर ही रखे गये हैं।

हिन्दू पंचाङ्ग की बनावट में यदि चन्द्र-मास द्वार के किवाड़ का काम देते हैं तो सूर्य मास चूल अथवा कब्ज़े का। कारण चन्द्रमास केवल २६.५३ दिन का होता है बस सम्भव है कि किसी एक सूर्यमास में दो नये चन्द्र दिवस (New-Moons) हो जायें और ऐसी दशा में दोनों ,चन्द्र-मास का नाम उपरोक्त रीति के अनुसार एक ही होगा। क्योंकि एक ही सूर्य-मास में प्रारम्भ हो जाते हैं। ऐसा होने पर पहला 'अधिक-मास'अथवा लौंद का महीना कहलायेगा और दूसरा 'निज-मास' अर्थात् वास्तविक (Real) मास। दूसरे महीने को निज-मास इस हेतु से कहते हैं कि आगामी संक्रान्ति इसी मास में होगी। क्योंकि प्रत्येक चन्द्र-वर्ष सूर्य-वर्ष की अपेक्षा लगभग १० दिन छोटा होता है और तीन वर्ष में लगभग एक मास का अन्तर हो जाता है इस लिये प्रत्येक तीसरे वर्ष लौंद का महीना अर्थात् अधिक-मास जोड़ दिया जाता है।

क्योंकि सूर्य-मास २६ दिन के भी होते हैं इस लिये यह भी सम्भव है कि किसी सूर्यमास में किसी भी चन्द्रमास का आरम्भ न हो ऐसी दशा में एक चन्द्रमास कम होना चाहिये। ऐसे चन्द्र-मास को क्षय-मास (Suppressed-Month) कहते हैं। क्षय-मास एक शताब्दी में एक या दो हो सकते हैं इस से अधिक नहीं।

इस हिसाब से चन्द्र-वर्ष (Lunar Year) तीन प्रकार का होता है। (१) १२ चन्द्र-मास का (२) १३ चन्द्र-मास का जिस में एक अधिक मास भी सम्मिलित है। (३) १३ चन्द्र-मास का जिस में दो अधिक-मास होंगे और एक क्षय-मास।

वर्त्तमान शताब्दी में दो क्षय-मास पाए जाते हैं। पहला सन् १९६३ ई० में होगा और दूसरा १९८२ में। जिस साल में क्षय-मास होगा उस साल में दो अधिक-मास होंगे। एक क्षय-मास से पहले और दूसरा क्षय-मास के पश्चात्। यह बात भी स्मरण रखने योग्य है कि मार्गशिर, पौष और माघ यह तीनों सूर्य-मास २९ दिन के होते हैं। बस इन्हीं तीन महीनों में से कोई सा क्षय-मास हो सकता है।

प्रश्न—भारतवर्ष में कितने सम्वत् प्रचलित हैं और यह कब २ कायम हुये ?

उत्तर—इस देश में २१ भिन्न २ सम्वतों का पता चलता है। उनमें से ५ सर्वथा छूट गये हैं और ७ कहीं २ वर्ते जाते हैं, जैसे विलायती और अमली सन् उड़ीसा में और सप्तर्षि सम्वत् काश्मीर में। शेष ९ जो अधिकतर प्रचलित हैं वह निम्न प्रकार हैं:—

(१) कलियुग सम्वत् जो सारे भारतवर्ष में प्रचलित है वर्त्तमान् ईसवी सन् से यह सम्वत् ३१०१ वर्ष पूर्व प्रारम्भ होता है।

(२) विक्रमीय सम्वत् जो सन् ईसवी से ५७ वर्ष पूर्व प्रारम्भ होता है।

(३) शाका-सम्वत् जो सन् ईसवी से ७८ वर्ष पश्चात् प्रारम्भ हुआ, यह सम्वत् भी सारे भारत वर्ष में प्रचलित है।

(४) कोलम सम्वत् जो मालाबार, कोचीन और ट्रावनकोर में प्रचलित है। यह सम्वत् सन् ईसवी से ८२५ वर्ष पश्चात् प्रचलित हुआ।

(५) फ़सली सन् जो बङ्गाल और संयुक्तप्रान्त में प्रचलित है। यह सन् ईसवी से ५९२ वर्ष पश्चात् प्रचलित हुआ।

(६) फ़सली सन् (दक्षिणी) जो सन् ईसवी से ५९३ वर्ष पश्चात् शुरू हुआ।

(७) फ़सली सन् (मद्रास) जो सन् ईसवी से ५९० वर्ष बाद प्रारम्भ हुआ।

(८) महाराष्ट्रीय शाका सम्वत् जो शिवाजी के राज्याभिषेक (ज्येष्ठ शुक्ला १३) से आरम्भ हुआ।

(९) तारीख़ इलाही जिसका आरम्भ अकबर बादशाह के राज्याभिषेक समय (१४ फ़र्वरी सन् १५५६) से प्रारम्भ होता है।

शाहजहाँ के राज्य काल में इसका प्रचार जाता रहा।

भारतवर्ष में इनके अतिरिक्त दो और सन् प्रचलित हैं। एक सन् ईसवी। दूसरा सन् हिजरी जो १६ जौलाई सन् ६२२ ईसवी से प्रारम्भ होता है अर्थात् मोहम्मद साहब के वियोग समय से प्रारम्भ हुआ।

पूर्व के तीन संवतों की गणना की रीति और दूसरे सन् और संवतों की गणना की रीति में इतना भेद है कि पहले तीनों सम्वत् पहले वर्ष के समाप्त होने पर १ गिनते हैं और शेष सब प्रारम्भ होते ही एक गिन देते हैं। जैसे वर्त्तमान संवत् १९८२ अंग्रेज़ी गणना की रीति से सम्वत् १९८३ होगा।

इस्लामी जन्त्री की गणना चन्द्रमा की गति पर अवलम्बित है सूर्य से कोई सम्बन्ध नहीं। हिन्दू पंचांग में चन्द्र-मास २६ दिन १२ घण्टे ४४ मिनट ३ सेकण्ड का लिया जाता है किन्तु इस्लामी नियमानुसार २६ दिन १२ घण्टे का माना जाता है। और महीनों का क्रम इस भांति है कि एक २६ दिन का तो दूसरा ३० दिन का। इस प्रकार प्रति मास ४४ मिनट का अन्तर पड़ता है।

यह अन्तर ३० वर्ष में लगभग ११ दिन के बराबर हो जाता है। इन ११ दिन की कमी इस प्रकार पूरी की जाती है कि ३० वर्ष में से ११ वर्ष के अन्तिम मास में एक दिन बढ़ा दिया जाता है और जिस साल में यह दिन बढ़ाया जाता है वह लौंद का साल (Leap-year) कहलाता है। इस्लामी जन्त्री में ३० साल का एक युग माना है। किसी २ इस्लामी देश में प्रत्येक युग में दूसरा, पांचवां, सातवाँ, तेरहवां, पन्द्रवां, अठारहवां २१ वां, २४ वां, २६ वां, और २६ वां वर्ष लौंद का माना जाता है। और अन्य इस्लामी देशों में सातवें के स्थान पर आठवां, अठारहवें के स्थान पर उन्नीसवां और छब्बीसवें के स्थान पर सत्ताइसवां वर्ष लौंद का माना जाता है।

प्रश्न–२६ दिन के कौन कौन से महीने हैं और ३० दिन के कौन से ?

उत्तर—

(३० दिन के मास)	(२६ दिन के मास)
मौहर्रम	सफ़र
रबी-उल्-अव्वल्	रबी-उल्-सानी

जमादी-उल-अव्वल्	जमादी-उल्-सानी
रज्जब	शाबान
रमज़ान	शव्वाल
ज़िलक़द	ज़िलहिज

प्रश्न—हिन्दू ज्योतिषियों ने अपनी जन्त्री का नाम पञ्चाङ्ग रखा है यदि इनकी जन्त्री के पांच अंग हैं तो वह कौन कौन से हैं?

उत्तर—पत्रों में साधारण तौर से ७ या ८ बातें दिखलाई जाती हैं जिन में से पांच मुख्य हैं, जिनके बिना पञ्चाङ्ग बन ही नहीं सकता और यही हिन्दू जन्त्री के पाँच अंग हैं।

(१) वार—अथवा दिन का नाम जैसे सोम, मंगल आदि।

(२) तिथि—जो (Synodical Month) का तीसवां भाग जो $\frac{२९.५३}{३०}$ अथवा २२½ मिनट कम १ दिन की बराबर होती है

(३) नक्षत्र—जो $\frac{२७.३४}{२७}$ = १ दिन १८ मिनट के बराबर होता है।

(४) योग—जितने समय में चांद और सूर्य दोनों $\frac{४०}{३}$° अर्थात् १३ दर्जे २० मिनट का अन्तर तै करें उस के जोड़ को योग कहते हैं। योग का सम्बन्ध ज्योतिष से कुछ नहीं है। केवल गणित की एक रीति का नाम है। योग किसी ग्रह या तारे की गति नहीं बतलाता जैसे कि तिथि और नक्षत्र चन्द्रमा की गति का वर्णन करते हैं। गिनती में नक्षत्र की तरह योग भी २७ ही हैं परन्तु २७ योग का समय केवल २५.४२ दिन है।

(५) करण—प्रत्येक तिथि के दो सम-भाग किये जाते हैं और प्रत्येक भाग का नाम 'करण' है।

प्रश्न— हिन्दुओं का ज्योतिष शास्त्र प्राचीन और सही होते हुए भी त्यौहारों के सम्बन्ध में बहुधा मत-भेद पाया जाता है। एक कहता है कि अमुक त्यौहार आज मानना चाहिये और दूसरा कहता है कि कल। प्रायः व्रत के दिनों में भी यही भेद पड़ता है। व्यवहारिक दुनिया में एक तिथि एक ही दिन मानी जाती है क्या त्यौहार आदि के लिये भी यह नियम ठीक नहीं?

उत्तर—व्यवहार सम्बन्धी वर्ष, मास अथवा तिथि का निश्चय और निर्णय करना सरल है तथा इस नियम की बड़ी आवश्यकता है क्योंकि इसी में सारे देश का बड़ा हित है। परन्तु धार्मिक कामों में एकता का होना कठिन है। विशेषकर भारतवर्ष जैसे देश में जहां नाना प्रकार के मत फैले हुए हैं। "खोपड़ी खोपड़ी का मत न्यारा" वाली कहावत यहां चरितार्थ होती है।

यह तो विदित हो ही चुका कि तिथि पूरे २४ घण्टों की नहीं होती किन्तु २३ घण्टे और ३७½ मिनट की होती है, इसी कारण एक ही तिथि में कुछ भाग एक दिन और शेष भाग दूसरे दिन का आ पड़ता है। व्यवहारिक दुनिया में 'उदय तिथि' ली जाती है अर्थात् वही तिथि मानी जाती है जो सूर्योदय के समय पर हो, परन्तु धार्म्मिक कामों में यह नियम सर्वदा नहीं माना जाता। किसी २ काम के लिये तिथि उस दिन मानी जाती है जिस दिन उसका आरम्भ हो और किसी २ धार्मिक काम के लिये दूसरे समय मानी जाती है।

त्यौहार और व्रत के लिये निश्चित् समय रक्खा गया है इस लिये सूर्योदय से सूर्यास्त तक समय के पांच भाग किए गये हैं:—

(१) प्रातःकाल–सूर्योदय से ६ घड़ी तक (Early forenoon)
(२) „ ६ घड़ी से १२ घड़ी तक (Fore-noon)
(३) मध्यान्ह–१२ घड़ी से १८ घड़ी तक (Mid-day)
(४) अपरान्ह–१८ घड़ी से २४ घड़ी तक (After-noon)
(५) „ –२४ घड़ी से ३० घड़ी तक (Late After-noon)

इनके अतिरिक्त सूर्योदय से ४ घड़ी पूर्व के समय का नाम ऊषाकाल (Rise of Dawn) अथवा अरुणोदय रखा है। सूर्यास्त से ६ घड़ी बाद के समय को प्रदोष (Evening) और अर्द्ध रात्रि पर दो घड़ी समय का नाम निशीथ (Mid night) रखा है।

यदि एक तिथि किसी दिन सूर्य्यास्त होने से ४ घड़ी पूर्व आरम्भ होकर दूसरे दिन समाप्त होती है तो उस को पूर्व-विधा कहते हैं और ऐसी तिथि में त्यौहार पहिले दिन मनाया जाता है और तिथि-द्वयम् (Two Tithies meeting) में भी त्यौहार पहिले दिन मनाया जाता है।

त्यौहारों का सम्बन्ध नक्षत्रों से भी होता है। जैसे उपाकर्म-विधि अर्थात् सलूनो का त्यौहार जो पूर्णमासी को माना जाता है वह श्रविष्ठा अर्थात् धनिष्ठा नक्षत्र में मनाया जाना चाहिये। इसी प्रकार अन्य त्यौहारों की तिथि का निर्णय सरलता से हो सकता है जिनका सम्बन्ध नक्षत्रों से है। दक्षिण देश में ऐसे त्यौहारों का दिन निश्चय करने में जिनका सम्बन्ध नक्षत्रों से है सूर्य मास से काम लिया जाता है और तिथि सम्बन्धी त्यौहारों की गणना भी सूर्यमास के हिसाब से करते हैं। हिन्दू त्यौहार विशेषकर तिथि सम्बन्धी होते हैं। भारतवर्ष के भिन्न २ भागों में भिन्न २ मत के लोग

बसते हैं और एक ही भाग में कई भिन्न मत वाले भी पाये जाते हैं। अपने २ मतानुसार त्यौहार मनाते हैं। इसलिये जब तक यह मत भेद बन रहा है त्यौहारों के मनाने के लिये दिन का निश्चय करना असम्भव ही प्रतीत होता है और हिन्दुओं के त्यौहार भी तो संख्या रहित हैं। यहां तो '८ वार ६ त्यौहार' की कहावत चरितार्थ होती है। (यद्यपि ८ बार का कहना यह एक महान् भूल है क्योंकि वार की शास्त्रोक्त संख्या तो ७ ही है)। कोई तिथि ख़ाली नहीं दोनों पक्षों के तीसों दिन त्यौहारों से भरे पाये जाते हैं।

प्रश्न—त्यौहारों की सूची तो बन ही सकती है क्योंकि भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त में पंचाङ्ग बनते हैं। अपने २ देशों में त्यौहारों के मनाने के लिये तो समय नियत करते ही होंगे ?

उत्तर—सूची अवश्य बन सकती है किन्तु बड़ी कठिनाई का सामना होगा और लम्बी भी बहुत होगी इसलिये प्रसिद्ध प्रसिद्ध त्यौहारों की तिथिवार सूची संक्षेप रीति से नीचे दी जाती है।

तिथिवार त्यौहारों की सूची।

प्रतिपदा–१ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा जो सर्वदा मेष की संक्रान्ति से पूर्व होती है हिन्दुओं के चान्द्र-वर्ष का प्रथम दिन (New-years-day) है। और इसी कारण इस तिथि का नाम वत्सराऽऽरम्भ रखा है। कोई कोई इस तिथि को नवरात्र–आरम्भ भी कहते हैं दूसरा नवरात्र–आरम्भ दिन आश्विन शुक्ला प्रतिपदा को होता है।

२. कार्त्तिक शुक्ला प्रतिपदा–इस को 'बलि–प्रतिपदा' अथवा बलि-पूजा भी कहते हैं समय के विचार से यह पूर्वविध होती है।

३. भाद्रपद बाहूल प्रतिपदा–यह त्यौहार महाल्य-आरंभ कहलाता है।

४. फाल्गुन बाहूल प्रतिपदा–यह वसन्तोत्सव का दिन है।

द्वितीया–१. आषाढ़ शुक्ला द्वितीया–'रथयात्रा उत्सव' या 'राम रथोत्सव' का दिन है।

२. कार्त्तिक शुक्ला द्वितीया–इसको 'यम-द्वितीया' या 'भ्रातृ–द्वितीया' कहते हैं।

३. आषाढ़,श्रावण, भाद्रपद और आश्विन की बाहूल द्वितीया पर एक व्रत रखा जाता है जिसे चांद देखकर खोलते हैं। इस व्रत को संस्कृत में 'असून्यसयन–व्रत' कहते हैं।

तृतीया–१. चैत्र शुक्ला तृतीया–यह गौरीतृतीया कहलाती है। इसको मत्स्य-जयन्ती भी कहते हैं जो मध्यान्होपरान्त मनाई जाती है।

२. वैशाख शुक्ला तृतीया–कल्पादि और त्रेतायुगादि दिन हैं। इसको 'परशुराम जयन्ती' भी कहते हैं।

३. ज्येष्ठ शुक्ला तृतीया–इस तिथि पर भवानी की पूजा होती है और इसको 'अम्बा-तृतीया' कहते हैं

४. श्रावण बाहूल तृतीया–इसका नाम 'कजली–तृतीया' है।

५. भाद्रपद शुक्ला तृतीया—इसको 'बाराह-जयन्ती' कहते हैं।

चतुर्थी—१. प्रत्येक मास की शुक्ला चतुर्थी 'गणेश—चौथ' कहलाती है विशेष कर माघ की इस तिथि पर दोपहर के समय गणेश जन्मोत्सव मनाया जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक मास की बाहुल चतुर्थी 'सङ्कष्ट-चतुर्थी' अर्थात् सकट-चौथ कहलाती है। इस तिथि पर व्रत रखा जाता है जो चन्द्रोदय पर खोला जाता है।

२. श्रावण बाहुल चतुर्थी पर गो-पूजन होता है।

पञ्चमी—१. श्रावण शुक्ला ५, 'नाग-पंचमी' कहलाती है। इस तिथि पर नागों की अथवा सांपों की पूजा होती है। यदि यह तिथि सूर्योदय से ६ घड़ी के अन्दर आरम्भ होकर दूसरे दिन सूर्योदय से ६ घड़ी के अन्दर समाप्त हो जाय तो यह त्यौहार पहिले दिन मनाना चाहिये।

२. भाद्रपद शुक्ला पंचमी—यह 'ऋषि-पंचमी' कहलाती है और दोपहर को मनाई जाती है।

३. आश्विन शुक्ला पंचमी—यह 'ललिता—पंचमी' कहलाती है दोपहर बाद दुर्गा-पूजन होती है।

४. मार्गशिर शुक्ला ५ मी—कहीं कहीं यह भी नाग-पंचमी कहलाती है।

५. माघ शुक्ला पंचमी—इसी को 'वसन्त-पंचमी' कहते हैं। मध्यान्ह से पहिले काम और रति की पूजा की जाती है।

६. फाल्गुन बाहूल पंचमी–यह 'रङ्ग-पंचमी' कहलाती है

षष्ठी–१. श्रावण शुक्ला षष्ठी–यह 'कलकी–जयन्ति' का दिन है। यह विष्णु का अन्तिम औतार माना जाता है।

२. भाद्रपद शुक्ला षष्ठी–इस को 'सूर्य-षष्ठी' कहते हैं

३. भाद्रपद बाहूल षष्ठी–यह 'चन्द्रमा-षष्ठी' कहलाती है। यदि यह तिथि मङ्गलवार को रोहिणी नक्षत्र व्यतिपात योग और सूर्य हस्त नक्षत्र में हो तो 'कपिल-षष्ठी' कहलाती है।

सप्तमी–यदि सप्तमी मङ्गलवारी हो और नक्षत्र रेवती हो तो बड़ी शुभ गिनी जाती है। रविवार की शुक्ला सप्तमी 'विजय-सप्तमी' कहलाती है। यदि शुक्ला सप्तमी को हस्त नक्षत्र का पहला चरण आ जाये तो 'भद्रा' कहलाती है। यदि शुक्ला संक्रान्ति पर हो तो 'महाविजय-सप्तमी' कहलाती है।

१. वैशाष शुक्ला सप्तमी–यह 'गङ्गा-सप्तमी' कहलाती है

२. श्रावण बाहूल सप्तमी 'शीतला-सप्तमी' कहलाती है

३. आश्विन शुक्ला सप्तमी को मूल नक्षत्र में सरस्वती पूजा होती है।

अष्टमी–१. प्रत्येक मास की शुक्ला अष्टमी दुर्गा या अन्नपूर्णा का दिन माना जाता है और बाहूल अष्टमी जो 'कृष्ण–दिवस' मानी जाती है काल–अष्टमी कहलाती है।

१. चैत्र शुक्ला अष्टमी भवानी की उत्पत्ति का दिन माना जाता है यदि यह अष्टमी बुधवार की हो और

नक्षत्र पुनर्वसु हो तो स्नान के लिये मुख्य दिन माना जाता है।

२. श्रावण बाहूल अष्टमी को 'जन्म-अष्टमी' अर्थात् कृष्ण-जयन्ती कहते हैं। यदि इस अष्टमी पर रोहिणी नक्षत्र आ जाय तो उसमें विशेषता हो जाती है।

३. भाद्रपद शुक्ला अष्टमी पर यदि ज्येष्ठा नक्षत्र हो तो 'गौरी-पूजा' और व्रत का दिन माना जाता है।

४. भाद्रपद बाहूल अष्टमी को महालक्ष्मी का व्रत रखा जाता है।

५. आश्विन शुक्ला अष्टमी 'महा-अष्टमी' कहलाती है विशेषकर वह जो मंगलवारी हो।

६. कार्त्तिक शुक्ला अष्टमी 'गोप-अष्टमी' कहलाती है। इस दिन गौ की पूजा होती है।

७. कार्त्तिक बाहूल अष्टमी 'कालभैरव-जयन्ती' मानी जाती है।

८. माघ शुक्ला अष्टमी 'भीष्म-अष्टमी' कहलाती है और दोपहर को मनाई जाती है।

९. माघ बाहूल अष्टमी 'सीता-जन्म' का दिन माना गया है।

नवमी—१. चैत्र शुक्ला नवमी 'राम-नौमी' अर्थात् रामजयन्ती कहलाती है और दोपहर की पूजा होती है।

२. आश्विन-शुक्ला-नवमी 'महानवमी' और 'दुर्गा नवमी' के नाम से विख्यात है। पूजन दोपहर को होता है।

३- कार्त्तिक शुक्ला नवमी कृतयुग का आदि है।

दशमी-१. आश्विन शुक्ला दशमी 'विजयदशमी' कहलाती है जिस को दशहरा भी कहते हैं। पूजन दोपहर बाद का है। श्रवण नक्षत्र आ जाने से विशेषता हो जाती है और 'बुद्ध-जयन्ती' भी मानी जाती है।

एकादशी-प्रत्येक एकादशी व्रत का दिन माना गया है शुक्लपक्ष की हो या बाहुल पक्ष की। नाम इन के भिन्न२ रखे गये हैं, जैसे बैसाख शुक्ला ११ 'मोहिनी एकादशी' कहलाती है। ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी 'निर्जला-एकादशी' कहलाती है। श्रावण बाहुल एकादशी 'अजा-एकादशी' कहलाती है। भाद्रपद बाहुल एकादशी 'इन्द्रा-एकादशी' कहलाती है। इसी प्रकार प्रत्येक एकादशी का नाम भिन्न भिन्न रखा गया है।

द्वादशी-१. आषाढ़ शुक्ला द्वादशी से, 'चतुर्मास व्रत' आरम्भ होता है।

२. कार्त्तिक शुक्ला द्वादशी 'चतुर्मास व्रत' की समाप्ति का दिन है।
'तुलसा-विवाह' अर्थात् विष्णु का तुलसा के साथ विवाह इसी तिथि पर माना जाता है।

त्रयोदशी-१. चैत्र शुक्ला त्रयोदशी 'मदन-त्रयोदशी' कहलाती है। कामदेव की पूजा की जाती है।

२. आश्विन बाहुल त्रयोदशी 'धन-त्रयोदशी' कहलाती है जिसको धन-तेरस कहते हैं। साहूकार लोग धन की पूजा करते हैं।

चतुर्दशी– साधारण रीति से प्रत्येक मास की बाहुल चतुर्दशी 'शिवरात्रि' कहलाती है।

(१) वैशाख शुक्ला चतुर्दशी 'नरसिंह-जयन्ती' मानी जाती है।

(२) भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी 'अनन्त-चौदस' कहलाती है

(३) आश्विन बाहुल चतुर्दशी 'नरक-चौदस' कहलाती है। इस तिथि पर व्रत रखा जाता है। स्वाती नक्षत्र आ जाने पर दिवाली का पूजन चतुर्दशी को होता है।

(४) कार्त्तिक शुक्ला चतुर्दशी 'बैकुण्ठ-चतुर्दशी' कहलाती है अर्ध रात्रि का पूजन है।

(५) माघ बाहुल चतुर्दशी 'महा-शिवरात्रि' कहलाती है। व्रत रखा जाता है और पूजन अर्धरात्रि को होता है।

पञ्चदशी– शुक्ला पञ्चदशी पूर्णमाशी कहलाती है और बाहुल पञ्चदशी अमावस्या कहलाती है। एकादशी की तरह प्रत्येक पूर्णिमा का भिन्न नाम है। सोमवारी पूर्णिमा कहीं २ विशेषता के साथ मानी जाती है और 'सोमवती पूर्णिमा' कहलाती है।

शुक्ला-(पञ्चदशी)- (१) चैत्र पूर्णिमा हनुमज्जयन्ती का दिन माना जाता है और रविवार वृहस्पतिवार व शनिवार की पूर्णिमा 'स्नान की पूर्णिमा' कहलाती है।

(२) वैशाख पूर्णिमा कूर्म-जयन्ती दिवस है। पूजा तीसरे पहर होती है।

(३) ज्येष्ठ पूर्णिमा–'वात-पूर्णिमा' कहलाती है। यदि चन्द्रमा और बृहस्पति ज्येष्ठा नक्षत्र में हों और सूर्य रोहिणी नक्षत्र में तो महा-ज्येष्ठी कहलाती है।

(४) आषाढ़ पूर्णिमा–दोपहर से पहले व्यास-पूजा होती है। इसका नाम कोकिल-व्रत भी है।

(५) श्रावण पूर्णिमा–ऋग्वेदी और यजुर्वेदी लोगों के लिये विशेषता रखती है और ऋग्यजुस्श्रावणी कहलाती है। राखी पूर्णिमा भी इसी का नाम है जिसे रक्षा-बन्धन भी कहते हैं। किसी २ देश में नाराली पूर्णिमा कहलाती है जहां के निवासी समुद्र अथवा नदी में नारियल फेंकते हैं।

(६) भाद्रपद पूर्णिमा श्राद्ध आरम्भ के लिये नियत है।

(७) आश्विन पूर्णिमा 'कोजागरी–पूर्णिमा' कहलाती है। अर्द्धरात्रि तक व्रत रखा जाता है। लक्ष्मी और इन्द्र की पूजा होती है इसी का नाम 'नव-अन्न-पूर्णिमा' है क्योंकि इस तिथि पर नया अन्न पकाया जाता है।

(८) कार्त्तिक पूर्णिमा को चतुर्मास व्रत समाप्त होता है। कृत्तिका नक्षत्र आ जाने से विशेषता आ जाती है। रोहिणी नक्षत्र के साथ महा कार्त्तिकी कहलाती है।

(९) मार्गशिर पूर्णिमा 'दत्ता-जयन्ती' कहलाती है। सायंकाल के समय दत्तात्रेय की पूजा होती है।

मृगशिर नक्षत्र के साथ विशेषता मानी जाती है। इस तिथि पर नमक-दान शुभ गिना जाता है। आर्द्रा नक्षत्र के साथ शिव जी की पूजा का दिन माना जाता है और आर्द्रा नक्षत्र के साथ उसी सम्वत् में होगी जब कि मार्गशिर से पहले कोई महीना लौंद का हो।

(१०) माघ पूर्णिमा—चन्द्रमा और वृहस्पति यदि मघा नक्षत्र में हों तो 'महामाघी' कहलाती है।

(११) फाल्गुन पूर्णिमा—इसको होलिका या हुतासनी पूर्णिमा कहते हैं। पूजा शाम को होती है। दक्षिणवालों का ऐसा मत है कि शिव जी ने काम को इसी दिन दग्ध किया था।

बाहूल—१. श्रावण के अन्त की और भाद्रपद के आरम्भ की अमावस्या-पितृ अमावस्या कहलाती है।

२. भाद्रपद के अन्त और आश्विन के आरम्भ वाली अमावस्या सर्व-पितृ या महालिया अमावस्या कहलाती है चन्द्र और सूर्य के हस्त-नक्षत्र में आने से विशेषता हो जाती है।

३. आश्विन अन्त और कार्त्तिक आरम्भ वाली अमावस्या दीपावलि का त्यौहार है। स्वाती नक्षत्र के साथ विशेषता वाली कहलाती है।

४. पौष के अन्त और माघ के आदि वाली अमावस्या यदि यह अमावस्या रविवार को दिन में आ आवे, नक्षत्र श्रवण और योग व्यतीपात हो तो 'अर्द्ध-उदय' कहलाती है और यह तीनों बातें

उसी सम्वत् में मिलेंगी जिस सम्वत् में माघ से पूर्व लौंद का महीना होगा। यदि इन तीनों बातों में से एक की भी कमी है तो 'महा-उदय-अमावस्या' कहलाती है।

५. माघ के अन्त और फाल्गुन के आदि की अमावस्या 'द्वापर-युगादि-अमावस्या' है। दोपहर बाद मानी जाती है।

६. फाल्गुन के अन्त और चैत्र के आरम्भ की अमावस्या 'मन्वादि-अमावस्या' कहलाती है।

प्रश्न—शुक्ल पक्ष के त्योहारों की तिथि तो ठीक मालूम पड़ती है परन्तु कृष्ण-पक्ष के त्यौहारों की तिथियों में भेद पाया जाता है। एक मास का अन्तर पाया जाता है इसका क्या कारण है?

उत्तर—इसका कारण मास शब्द के अर्थ में मिलता है। मास चाँद का नाम है और महीने को भी मास कहते हैं। ज्योतिष में पूर्णमासी का अर्थ पूर्ण-चन्द्रमा (Full-Moon) ऐसा है परन्तु किसी २ ने पूर्णमासी का अर्थ पूरा महीना माना है और इसी अर्थ को लेकर कृष्ण-पक्ष की प्रतिपदा को मास का आरम्भ मानने लगे। वास्तव में महीने का आरम्भ शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा (New Moon) है। चन्द्रमास का आरम्भ नये चांद से होता है परन्तु भारतवर्ष में किसी किसी स्थान पर विशेषकर संयुक्तप्रान्त में किसी कारण से कृष्ण पक्ष को पहला पक्ष और शुक्ल पक्ष को दूसरा पक्ष मानने लगे। परन्तु यह प्रथा दोष रहित नहीं है क्योंकि संयुक्तप्रान्त में भी सम्वत् का आरम्भ शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से माना जाता है और यह उचित भी नहीं प्रतीत होता कि आधा

महीना एक सम्वत् में लिया जाय और शेष दूसरे सम्वत् में। सम्वत् और मास का एक साथ आरम्भ होना ही उचित है। ज्योतिष-शास्त्र शुक्ल पक्ष को पहला पक्ष बतलाता है। ज्योतिष की दृष्टि से संयुक्तप्रान्त की रीति अनोखी मालूम पड़ती है। यदि विचार किया जाय तो कोई वास्तविक अंतर नहीं है केवल गिनती की रीति के भेद से यह अन्तर पड़ रहा है। इस रीति-भेद का ही परिणाम है कि 'नाग-पूजा' जो मास के प्रथम पक्ष में होनी चाहिये और ज्योतिष जानने वाले और ज्योतिष की रीति से गणित फैलाने वाले श्रावण के शुक्ल-पक्ष की पञ्चमी को 'नाग-पञ्चमी' मानते हैं और संयुक्तप्रान्त में जहां कृष्ण-पक्ष प्रथम-पक्ष माना जाता है वहां कृष्ण-पक्ष की पञ्चमी को नागपञ्चमी मानने लगे।

प्रश्न—ज्योतिष-शास्त्र में सय्यारों का अथवा ग्रहों का वृत्तान्त तो विस्तार-पूर्वक पाया जाता है। क्या ज्योतिषियों ने तारों के विषय में भी ऐसी ही खोज की है? यदि की है तो इनको स्थिर माना है वा अस्थिर और क्या तारों की गणना हो सकती है?

उत्तर-तारे वास्तव में असंख्य हैं। उनकी गणना मनुष्य के ज्ञान में असम्भव है। वर्तमान ज्योतिष ने मुख्य २ तारों और तारागणों का वृत्तान्त जाना है। यह आकाश में रत्नों की तरह जड़े हुए हैं। आकाश की जगमगाहट इन्हीं पर अवलम्बित है। हमारे सम्बन्ध में स्थिर मालूम होते हैं। सम्बन्ध कहने से तात्पर्य यह है कि प्रत्येक वस्तु का हल्का भारीपन और छोटा बड़ापन सम्बन्ध परक है। स्वयम् कोई वस्तु बड़ी वा छोटी नहीं कहला सकती। एक की अपेक्षा में दूसरी छोटी या बड़ी कहला सकती है। इस परस्पर नाते का नाम ही तो सम्बन्ध है।

जब तक हम किसी नियत स्थान से किसी वस्तु का अन्तर न जाने और दूसरी वस्तु के अन्तर से उस की तुलना न करें हम इस बात के कहने के अधिकारी नहीं हो सकते कि वह दूर है वा समीप। तारे हमको प्रति दिन, प्रति वर्ष और प्रति शताब्दी में एक ही स्थान पर दिखलाई देते हैं। इसी कारण मनुष्य उनको स्थिर मानते हैं।

सृष्टि मनुष्य कृत नहीं। इसका रचने वाला वही है जिस को हम अलख, अनूप, अनन्त, अनादि, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान्, निराकार आदि विशेषणों करके मानतेहैं। इसकी रचना भी अनन्त ही है। सृष्टि के रत्नों की सीमा की खोज में सहस्रों अन्वेषक मर गये और सहस्रों मरेंगे। परन्तु उसका अन्त किसी ने नहीं पाया और न भविष्य में पाने की आशा है विचारे ज्योतिषियों की क्या शक्ति है कि अपार के पार जा सकें। कल्पनायें अवश्य कर सकते हैं और ज्योतिषियों की कल्पनायें निराधार नहीं होतीं। इस अवसर पर यह कहना भी आवश्यक है कि अनन्त और असंख्य जैसे शब्दों का वास्तविक ज्ञान ज्योतिषियों को ही हो सकता है। ज्योतिषियों का विश्वास अटल, उनका निश्चय दृढ़ और उनका अनुमान माननीय होता है। वह लोग स्पष्ट तथा मूर्तिमान् शब्दों में तारागणों को असंख्य कहते हैं और अनन्त मानते और जानते हैं।

प्रश्न–क्या ज्योतिषियों ने देवमार्ग अथवा स्वर्ग की सड़क के विषय में भी कुछ कहा है?

उत्तर–क्यों नहीं? इस के विषय में वर्तमान-ज्योतिषियों ने ऐसी ही जांच की है जैसी हिन्दुओं के प्राचीन ज्योतिष ने की थी। इस प्रकाश की नदी को अंग्रेज़ी वाले 'मिल्की वे'

(Milkey-way) और फ़ारसी वाले 'ख़ते-कह-कशां' कहते हैं। आकाश में बहने वाली इस नदी में असंख्य धुंधले तारे बुल्बुलों की तरह बहते हुए पाये जाते हैं। ग्रीष्म ऋतु की रात्रि में 'गोधूल' अथवा 'सन्धि-प्रकाश' (Twi-light) के अस्त होने पर इस नदी का दक्षिण भाग अति सुन्दर और मन मोहने वाला दिखाई पड़ता है। मानो दक्षिण का अन्तिम भाग फट कर दो समान बहने वाली नदियां बह रहीं हैं और कहीं२ तो ऐसी चमकती हैं मानो अग्नि का प्रकाश हो रहा है। इस नदी का छाया-चित्र (Photographic-plate) देखने योग्य ही है। कहीं तारों की पंक्तियां दृष्टिगोचर होती हैं, कहीं मेघ-समूह दिखलाई देते हैं, कहीं लम्बी और टेढ़ी सड़कें और कहीं २ श्याम-वर्ण वाले अनेक भांति के आकार दृष्टि-पथ में आते हैं। दूर्बीन द्वारा इस नदी में अनन्त ऐसे तारे बुल्बुलों की तरह बहते हुए दिखाई देते हैं जिन को मनुष्य इस यन्त्र की सहायता बिना नहीं देख सकता है। इस प्रकाश की नदी को गोल पट्टे से उपमा देते हुए ज्योतिषी लोग इसको आकाश की गौ का पट्टा बताते हैं जिसमें असंख्य अनमोल रत्न जड़े हुए हैं।

प्रश्न—क्या वर्तमान ज्योतिष ने सृष्टि-रचना के विषय में भी कोई विचार प्रकट किया है ?

उत्तर—हां ! शास्त्र-वेत्ताओं ने अथवा ज्योतिश-शास्त्र और शक्ति-शास्त्र (Physics) के जानने वालों ने इस सम्बन्ध में अपना विचार भली भांति प्रकट किया है। उन की कल्पनायें अपरिमित और निराधार भी नहीं हैं किन्तु बहुत कुछ सत्य पर अवलम्बित हैं। संसार में प्राप्त साक्षी से उन के अनुमान (Hypothesis) को बहुत कुछ सहायता मिलती है। तारों

और सय्यारों की उत्पत्ति के सबन्ध में वर्त्तमान अनुमान ऐसा है कि सब ही की उत्पत्ति एक आकाश धुन्द से है जो मेघ समूह की तरह बहता हुआ दिखाई देता है और इस अनुमान का नाम (Nebulous-Hypothesis) है जिस को युक्ति या सिद्धान्त भी कह सकते हैं।

प्रश्न—कृपया संक्षिप्त रीति से इस सिद्धान्त का वर्णन कीजिये।

उत्तर—ज्योतिष-शास्त्र ने आकाश-निवासी चार वर्णों के माने हैं। इन चारों की उत्पत्ति आकाश-धुन्द (Nebula) से मानी हैं। वर्तमान काल तक लगभग ८५०० मेघ-समूह अथवा आकाश धुन्द देखे गये हैं। यह समूह चार प्रकार के होते हैं।

(१) वह जिन से सय्यारों (Planets) की उत्पत्ति होती है। यह गोल और छोटे होते हैं। सिरे की अपेक्षा में इनका केन्द्र अधिक उज्ज्वल और चमकदार होता है।

(२) वह जिन से तारों की उत्पत्ति होती है। इन का मध्य अधिक गाढ़ा अथवा मोटा होता है।

(३) वह जो छल्लाकार हैं और जिन के सिरे केन्द्र की अपेक्षा में अधिक चमकदार होते हैं।

(४) वह जो पेचदार और गेंडली मारे दिखाई पड़ते हैं। वर्त्तमान ज्योतिष में क्रमशः इनके नाम यह हैं :—

(1) (Planetary Nebulæ)

(2) (Nebulous Stars)

(3) (Annular Nebulæ)

(4) (Spiral Nebulæ)

प्रश्न–आकाश निवासियों के चार वर्ण कैसे माने गये ?

उत्तर–यदि इनकी उत्पत्ति पर विचार किया जाय तो चारों एक ही वंश के पाये जाते हैं क्योंकि सब की उत्पत्ति (Nebulæ) से है और इस भाव से सब का एक ही नाम होना चाहिये। वह नाम तारा (Star) हो सकता है परन्तु भिन्न २ कर्म्म और धर्म्म के कारण इनके नाम भिन्न २ हो गये और वर्ण व आश्रम भी भिन्न २ मिल गये।

(१)

वह तारे जो स्थिर हैं (Fixed Stars) सब एक से उज्ज्वल और चमक वाले नहीं होते और इस भेद के कारण ज्योतिषियों ने इनकी ६ श्रेणियां नियत की हैं। यदि छठी श्रेणी वाला १ दर्जे उज्ज्वल है तो पांचवी श्रेणी वाला $\frac{५}{२}$ दर्जे, चौथी श्रेणी वाला $\frac{२५}{४}$ दर्जे. तीसरी श्रेणी वाला $\frac{१२५}{८}$ दर्जे, दूसरी श्रेणी वाला $\frac{६२५}{१६}$ दर्जे और पहली श्रेणी वाला लगभग १०० दर्जे उज्ज्वल पाया जाता है।

निर्मल और स्वच्छ रात्रि में इनकी अधिक से अधिक संख्या जो मनुष्य की दृष्टि में आ सकता है २००० है। उस घेरे में जिसमें आकाश और पृथिवी मिलते हुये दिखाई पड़ते हैं यह स्थिर तारे वायु में बहने वाली भाप के कारण दिखाई नहीं पड़ते। यदि हम इन सब तारों को देख सकते तो दूर्बीन की सहायता बिना दीखने वालों की संख्या ६००० हो जाती।

इन तारों के समूह भिन्न २ दिखाई पड़ते हैं जिनके नाम ज्योतिषियों ने भिन्न २ रखे हैं। वर्त्तमान ज्योतिष में जो नाम इनको दिये गये हैं उनका सम्बन्ध बहुत कुछ ग्रीक और रोमन (जातियों के) पौराणिक शास्त्र (Mythology) से है और इन में से बहुत से समूह ऐसे भी हैं जिनका पता

प्राचीन ज्योतिष-शास्त्र अथवा हिन्दू ज्योतिष में मिलता है। जिस समूह को वर्त्तमान ज्योतिष (ग्रेट डिपर) कहता है उसी को हिन्दू ज्योतिष में सप्त-ऋषि कहा है और वर्त्तमान (स्माल-डिपर) को आकाश की हिरणियां मानी हैं।

(२)

दूसरी प्रकार के वह घूमने फिरने वाले तारे हैं जिनको सय्यारे (Planets) कहते हैं। इन में से बृहस्पति और शुक्र (Jupiter & Venus) अधिक से अधिक चमकने वाले स्थिर तारे से अधिक चमकदार हैं। मंगल, बुद्ध और शनि ऐसा प्रकाश नहीं रखते और नैपच्यून तो बहुत दूर होने के कारण दूर्बीन की सहायता बिना आंखों के सामने आता ही नहीं। स्थिर तारों की अपेक्षा यह सय्यारे हम से बहुत समीप हैं। किसी का भी अन्तर ३००००००००० तीन अरब मील नहीं है। Planet और सय्यारा इन दोनों शब्दों का अर्थ घूमने वाला है।

(३)

तीसरी प्रकार के दुमदार तारे अथवा पुच्छल तारे (Comets) हैं। इन में से कोई २ तो इतना बड़ा है कि सूर्य मण्डल का सभासद् कहला सकता है क्योंकि वह सूर्य के चारों ओर एक बन्द मार्ग-चक्र (Closed Elliptic Orbit) में घूमते हैं।

इन में से जो पैरेबोलिक और हाइपरबोलिक (Parabolic & Hiyperbolic) मार्ग पर चलते है वह अल्प-काल वाले पाहुने (Casual Visitors) कहलाते हैं क्योंकि अकस्मात् अपनी चमक-दमक दिखला कर किसी ऐसे देश को निकल जाते हैं जहां से फिर नहीं आते।

(४)

चौथी प्रकार के टूटते हुए या दौड़ते हुए तारे Meteors or Shooting Stars हैं। इनकी दशा बिल्कुल बावलों और दीवानों की सी है। क्षण में सनक उभर आती है और पृथिवी में सिर मारने को दौड़ पड़ते हैं। क्षण-भङ्गुर चमक दमक दिखला कर सर्वदा के लिये अपना आपा खो बैठते हैं।

प्रश्न-मुख्य मुख्य तारे या उनके समूह जिनके सम्बन्ध में ज्योतिषियों ने विचार व अनुसन्धान किया है कौन २ से हैं? और कब २ दिखाई देते हैं? और इनको स्थिर क्यों माना है?

उत्तर-स्थिर मानने का कारण विस्तृत रूप से तो ऊपर कहा गया है, किन्तु संक्षेप से इस स्थान पर यह कहा जा सकता है कि पृथिवी से इनका अन्तर इतना अधिक है कि उसकी गणना अनन्त और असंख्य शब्द से ही हो सकती है। पृथिवी की परिधि ८००० मील से कम है और यह अन्तर पृथिवी से तारों के अन्तर की अपेक्षा में अति न्यून अथवा तुच्छ है क्योंकि तारों के अन्तर की गणना अरबों और खरबों मील से होती है और इस कारण से दो तारों में अन्तर पृथिवी वालों के लिये सदा एकसा दिखाई पड़ता है और जो अन्तर कल था वही आज है। सौ वर्ष पूर्व जो अन्तर था आज भी वही पाया जाता है। पृथिवी के चाहे जिस स्थान पर खड़े हो कर देखलो इस अन्तर में घटाव बढ़ाव नहीं पाया जाता। फिर तारों को स्थिर न कहें तो क्या कहें? यह सम्भव है कि जो तारे हमको स्थिर मालूम होते हैं वह चाहे अनन्त आकाश में चलते फिरते हों परन्तु जहांतक हमारे ज्ञान का सम्बन्ध है स्थिर ही कहलायेंगे।

तारामण्डल की संख्या बहुत बड़ी होने के कारण ज्योतिषियों ने केवल मुख्य २ समूह का ही विस्तार पूर्वक वृत्तान्त लिखा है। हम इन में से भी प्रसिद्ध समूह छांट कर संक्षिप्त रूप से नीचे देते हैं:—

जनवरी मास में दिखलाई देने वाले तारागण।

१. ग्रेट बेअर या अर्षा मेजर (Great Bear or Ursa Major)-इस समूह में अधिक प्रकाश वाले अथवा उच्च श्रेणी वाले १८ तारे हैं। जनवरी मास में यह समूह प्रतिदिन रात्रि के ६ बजे ध्रुव तारे के दांई ओर दिखाई देता है और ऐसा प्रतीत होता है कि एक बड़ा भालू अपनी पूछ के सहारे आकाश में लटक रहा है। यूनान के पौराणिक-शास्त्र में ऐसा लिखा है कि जब बृहस्पति महाराज अर्थात् जूपिटर ने इस भालू को आकाश में भेजना चाहा तो पूछ पकड़ कर आकाश में फेंक दिया।

प्रसिद्ध समूह सप्तर्षि-मण्डल (Great Dipper)-इस बड़े समूह (Constellation) का एक भाग है। सप्तर्षि मण्डल में जो सात उच्च श्रेणी के तारे हैं वह भिन्न २ नाम से विख्यात हैं।

२. अर्षा माइनर (Ursa Minor)-यूनान वालों ने इस समूह का नाम लिटिल डिपर (Little Dipper) रक्खा है और जिसको हिन्दू ज्योतिष आकाश में भ्रमण करने वाली हिरणी कहता है। यूनान वालों का कथन है कि इस छोटे भालू को प्रत्येक २४ घण्टे में एक बार पूछ पकड़ कर सैंकड़ों वर्ष घुमाया गया है इस कारण उसकी पूछ इतनी बड़ी हो गई कि उसका सिरा ध्रुव तारे से जा मिला।

इस समूह को देखने से ऐसा प्रतीत होता है मानों चमचे की डण्डी में अति कान्ति वाले चार तारे जड़े हुए हैं और चौथा तारा शेष तीन तारों से मिल कर चमचे की कटोरी बनाता है। इन सातों तारों के नाम भी भिन्न २ हैं और चमचे की कटोरी में जो तीसरी और चौथी श्रेणी के अति प्रकाशमान दो तारे जड़े हैं वह ध्रुव तारे के रक्षक कहलाते हैं। किसी समय (Phœnicians) के वास्ते यह आकाश में भ्रमण करने वाली हिरणी ऐसी उपयोगी थी जैसे कि आजकल समुद्र यात्रा करने वालों के लिये ध्रुव-तारा है। जिस प्रकार कि आजकल समुद्र यात्रा करने वाले की (Compass) दिशा-सूचक यन्त्र बिगड़ जाय तो वह ध्रुव तारे को देख कर ठीक कर लेता है और सीधे सच्चे रास्ते से लग जाता है इसी तरह प्राचीन काल में भूले भटके यात्री इस आकाश में भ्रमण करने वाली हिरणी से सीधा रास्ता पूछ लिया करते थे। शुरू जनवरी में प्रतिदिन ७ बजे सायंकाल यह समूह भली भांति दिखलाई देता है।

स्थिर तारों में से ध्रुव-तारा हम से अत्यन्त निकट होता हुआ भी इतने अन्तर पर है कि यदि हम ६० मील प्रति घण्टा चलने वाली रेल में सवार होकर ध्रुव तारे के पास जाना चाहें तो लगभग साठ करोड़ ६००००००० वर्ष में पहुँच सकेंगे।

३. कैसी-ओपिया (Cassiopeia)—यद्यपि इस समूह में भी ७ प्रज्वलित तारे हैं तथापि उनमें ५ मुख्य हैं। ३ दूसरी श्रेणी के और २ तीसरी श्रेणी के। इस समूह के देखने से ऐसा प्रतीत होता है मानो एक उच्च पद वाली स्त्री कुर्सी पर बैठी है इसी कारण इस समूह का नाम 'The Lady in the chair' रखा है।

ज्योतिषियों ने विचार कर कहा है कि पृथिवी पर रहने वाली रानी महारानी. काष्ठ अथवा धातु की कुर्सी पसन्द करती हैं किन्तु आकाश की महारानी के लिये वायु से भी सूक्ष्म द्रव्य (Ether) की कुर्सी होनी चाहिये।

फ़र्वरी मास में दिखाई देने वाले तारागण

इस मास में दिखलाई देने वाले मुख्य तारा-गण ६ हैं।

१. पिगेसस (Pegasus)–यह तारागण १३ तारों का समूह है। इसका आकार घोड़े का सा है।

२. ऐरीज़ (Aries)–इस समूह में केवल ३ मुख्य तारे हैं और सायंकाल होते ही पश्चिम उत्तर दिशा में दिखलाई देता है।

३. सीटियस (Ceteus)–यह तारागण शुरू फ़र्वरी में अन्धेरा होते ही दक्षिण-पश्चिम के कोण में दिखाई देता है और शीघ्र ही छिप जाता है। यह समूह १५ तारों का है।

४. टारस (Taurus)–अङ्गरेज़ी में इसको बुल (Bull) और हिन्दी में वृष कहते हैं। वृष राशि इसी के नाम पर है। यह अति प्रसिद्ध १२ मुख्य तारों का समूह है। इस समूह में प्लिपडीस (Pleiades) और हाइडीस (Hyades) और प्रथम श्रेणी वाला अल्देब्रां (Aldebran) तारा भी शामिल है। यह प्लिएडीस तारों का वही गुच्छा है जिस को फ़ारसी वाले अकद परवीन (Aqda Parveen) और अरबी वाले अक़द सुरइयाह (Aqda Suriah) कहते हैं और हिन्दी वाले आस्मानी-झूमका कहते हैं। अल्देब्रां (Aldebran) वृष की आंख के स्थान पर है। पृथिवी से इस तारे का अन्तर पद्म मील है।

५. ओरायन (Orion)-यह समूह फ़र्वरी के मध्य में सायंकाल के ८ बजे दक्षिण दिशा में मध्याङ्क रेखा (Meridian) पर नीचे की तरफ़ दिखाई देता है। इस समूह में २० तारे हैं जिन में से १६ अति प्रसिद्ध उच्च-श्रेणी वाले हैं।

इस अति कान्ति वाले तारागण को देखकर जिस मनुष्य के हृदय में कम्पायमान करने वाली हर्ष और आनन्द की लहर न उठे तो मानो रत्नजटित आकाश की छवि और शोभा का आनन्द भोगने के लिये उस मनुष्य को नेत्र ही नहीं मिले। इसका चित्र देखने से ऐसा प्रतीत होता है मानो एक महा बलवान् शिकारी अपने दांये हाथ में एक बड़ा डण्डा लिये खड़ा है और उसको इस तरह घुमा रहा है मानो सामने आने वाले (Taurus) बिजार के मस्तक पर जड़ ही देगा। उसकी कमर में दूसरी श्रेणी के ३ प्रसिद्ध तारे ऐसे चमकते हैं मानो रत्नजटित पटका बन्धा है जिस में एक तलवार लटक रहा है और उसमें चार तारे जड़े हैं।

आकाश-गङ्गा जिस को देवमार्ग अथवा स्वर्ग का रास्ता भी कहते हैं इस समूह के पास को होकर बहती हुई दिखाई देती है।

६. आरीगा (Auriga)-यह समूह सार्थी के नाम से विख्यात है। इस में मुख्य तारे ८ हैं। इस का आकार कोन का सा है।

मार्च में दिखाई देने वाले तारागण

इस मास में दिखलाई देने वाले मुख्य तारागण ७ हैं।

१. जैमीनाई (Gemini)-अथवा मिथुन राशि का तारा। इस समूह में अति कान्ति वाले १० तारे हैं जिनमें से दो कैस्टर

तथा पोलक्स (Castor and Pollux) अत्यन्त प्रकाशवान हैं। और क्योंकि यूनान का पौराणिक-शास्त्र इन को जोड़िया भाई बतलाता है इसलिये ऐसा वर्णन किया जाता है कि सूर्य के उस स्थान का नाम सोलर-मैनशन् (Solar Mansion) जिस को प्राचीन ज्योतिष-शास्त्र में मिथुन राशि कहा है इस तारागण के नाम पर रक्खा गया है।

कैष्टर (Castor) यह वह कान्तिवाला और प्रसिद्ध दुहरा तारा (Double Star) है जिसके दोनों भाग साधारण दुर्बीन से दिन में दीख सकते हैं। वर्त्तमान ज्योतिष के अनुसार पोलक्स (Pollux) अपने स्थान पर स्थिर है और कैष्टर (Castor) १८ मील प्रति सेकण्ड की चाल से पृथिवी की ओर चला आ रहा है।

मैकाले (Macaulay) ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'Lays of Ancient Rome' में कैष्टर को मानवी माना है और पोलक्स को अमर और अमानवी।

२. परस्यूस (Perseus)–इस समूह में २० मुख्य तारे हैं और दो छोड़ कर शेष १८ उच्च श्रेणी वाले हैं। मास के आदि में यह समूह पश्चिम-उत्तर दिशा में नीचे की ओर भली भांति दिखलाई देता है। यूनान के पौराणिक शास्त्र के अनुसार यह (Perseus) वही है जिसने मैडूसा (Medusa) राक्षसी का बध किया था और जिसको बृहस्पति ज्यूपिटर महाराज ने अपना सारथी बना लिया था।

३. कैन्सर (Cancer)–अथवा कर्क राशि का तारागण। यह समूह पांच प्रसिद्ध तारों का है और इस का आकार लौटी हुई (y) का सा है। मास के मध्य में सायंकाल के ९ बजे मध्यान्ह रेखा पर दिखाई देता है।

४. कैनिस मेजर (Canis Major)—यह समूह १० प्रसिद्ध तारों का है और ऐसा दिखाई देता है मानो कुत्ता अपने स्वामी ओरायन् (Orion) की ओर मुंह किये और गर्दन उठाये बैठा है। इस समूह में सीरियस (Sirius) मुख्य तारा है जो इस कुत्ते के मस्तक पर चमकता हुआ दिखाई पड़ता है। सीरियस भी दोहरा तारा है जिसका अन्तर पृथिवी से ५००००००००००००० (पचास नील) मील है। इस अन्तर के कारण इसका प्रकाश हमारे नेत्रों तक ८ वर्ष में पहुँच सकता है और इसका प्रकाश भी सूर्य के प्रकाश से चालीस गुणा है।

५. कैनिस-माइनर (Canis Minor)—अथवा छोटा कुत्ता। इस समूह में केवल दो प्रसिद्ध तारे हैं। यदि इन दोनों तारों को सीरियस (Sirius) के साथ देखा जाय तो एक समभुज-त्रिकोण (Equilateral-triangle) दिखाई देगा।

६. लीपस (Lepus)—इस समूह का आकार ख़रगोश का सा है और इस में ६ मुख्य और उच्च श्रेणी के तारे हैं। यदि 'ओरायन्' के साथ यह समूह देखा जाय तो ऐसा विदित होगा मानो उस शूरवीर योद्धा के पावों तले एक ख़रगोश पड़ा है।

७. लियो (Leo)—अथवा सिंह राशि का समूह। इस समूह में ७ प्रसिद्ध उच्च श्रेणी वाले तारे हैं और यह समूह दो भाग में दिखलाई पड़ता है। प्रथम भाग जो तीन तारों का है एक समकोण त्रिकोण (Equiangular-triangle) बनता है और दूसरा भाग हंसिया वा दरांती के आकार का है।

अप्रैल मास में दिखाई देने वाले तारागण।

इस मास में जो तारागण देखने योग्य हैं उनकी संख्या ६ है। परन्तु उन में से मुख्य तीन का वर्णन किया जाता है।

१. बूट्स (Bootes)–कुछ रात बीतने पर यह समूह अच्छी तरह दिखलाई पड़ता है। पहिली अप्रैल को ९ बजे के समय उत्तर-पूर्व दिशा में दिखलाई पड़ता है। यह समूह मुख्य ६ तारों का है। इन में से अति कान्ति वाले तारे का नाम पेरी-टूरस (Arlturus) है जो अत्यन्त बड़ा और बहुत प्रकाश वाला है। इसके अन्तर का अनुमान १००००००००००००००० १० पद्म मील है और इस का विस्तार भी इतना माना गया है कि सूर्य से १० लाख गुणा कहा जाता है और इसकी परिधि सूर्य की परिधि से १०० गुणी होगी। यदि यह अनुमान ठीक है तो इसकी गति प्रति सैकण्ड ३०० मील होगी परन्तु हमारी तरफ़ ५ मील प्रति सैकण्ड की गति से चलता हुआ प्रतीत होता है।

२. कारवस् (Carvus)–यह समूह ५ मुख्य तारों का है। अंग्रेज़ी भाषा में इसको मुर्ग़ा कहते हैं। यूनान के पौराणिक शास्त्र के अनुसार यह वही मानवी राजकुमारी है जिसको मिनरवा (Minerva) ने मुर्ग़ा बना दिया था।

३. कारोना बारिएलिस (Corona-Borealis)–यह समूह १२ तारों का है जिसमें ५ प्रसिद्ध उच्च श्रेणी के हैं। अप्रैल के अन्त में १ बजे रात से पहिले दिखलाई नहीं पड़ता। इसका आकार ताज का सा है।

मई मास में दिखलाई देने वाले तारागण।

इस मास में देखने योग्य तारागणों की संख्या ४ हैं।

१. लिरा (Lyra)–इस समूह में ६ प्रसिद्ध तारें हैं और ९ बजे रात के पूर्व-उत्तर दिशा में दिखलाई देता है। इस समूह में वीगा (Vega) एक अति कान्ति वाला तारा है। यह तारा

अति सुन्दर और महान् प्रकाश वाले तारों में से है। इसका तेज हमारे सूर्य के तेज से ३० गुणा है और इसका प्रकाश हमारे पास २० वर्ष में आ सकता है। पृथिवी की ओर १० मील प्रति सैकण्ड के हिसाब से आ रहा है। अनुमान होता है कि १२००० वर्ष के बाद यह ध्रुव तारे का पद ग्रहण कर लेगा।

२. हरकुलीस् (Hercules) पूर्व की ओर नीची निगाह से देखने से यह समूह लिरा के ऊपर दिखाई पड़ता है। ९ बजे बाद साफ़ २ दिखाई पड़ता है और इसका आकार भी ओरायन जैसे एक भद्रवीर पुरुष का सा है। यह समूह १७ तारों का है कई एक ज्योतिषियों ने ऐसा अनुमान किया है कि हमारा सूर्यमण्डल इस तारागण की ओर जा रहा है।

३. सिग्नस (Cygnus) यह समूह लिरा (Lyra) के पूर्व की ओर दिखलाई पड़ता है। इस समूह में मुख्य तारे १० हैं। यदि इन में से प्रसिद्ध तारे मिला कर देखे जायें तो रोमन सलीब (Roman-cross) का आकार दिखाई देगा और इसी कारण से इसका नाम उत्तरी-सलीब रखा है।

४. सैजिटा (Sagitta) जिसको अंग्रेजी में ऐरो (Arrow) अर्थात् तीर कहते हैं इस में ४ प्रसिद्ध तारे हैं। यह धनुष आकार वाला तारागण सिग्नस की दक्षिण दिशा में दिखलाई पड़ता है।

जून मास में दिखलाई देने वाले तारागण।

इस मास में देखने योग्य ६ मुख्य तारागण हैं।

१. लिब्रा (Libra) तुला-आदि में यह ५ मुख्य तारों का समूह स्कार्पियो (Scorpio) वृश्चिक का वह भाग था जिससे इस विषैले कीड़े के पञ्जे प्रतीत होते थे। स्मरण रहे कि (Scorpio) तारागण भी मई मास समूह में से एक है।

ईसवी सम्वत् के आदि से केवल ३०० वर्ष पूर्व मिश्र वालों ने इस समूह को पृथक् माना। महान् सीज़र (Augustus Cœsar) के समय में यह समूह न्याय-देवी कन्या (Virgo) की तराज़ू माना जाता था।

२. डैलफीनस (Delphinus)–अथवा जलचरी। इस समूह में पांच मुख्य तारे हैं। मरते समय रङ्ग बदलने वाली मछली को डैलफिनी (Delphine) कहते हैं परन्तु पौराणिक शास्त्र में डैलफिनी इन जलचर स्त्रियों का नाम रखा है जिन का नीचे का आधा अंग मछली के आकार का होता है।

३. एक्विल (Aquila)–जिस को अंग्रेज़ी में Eagle कहते हैं और हिन्दी में गृद्ध। यह समूह सैजिट्टा (Sagïtta) के दक्षिण की ओर दिखलाई देता है। इस में मुख्य तारे ६ हैं। अर्द्ध रात्रि के बाद २ बजे के क़रीब साफ़ दिखलाई देता है और ६ बजे से पहिले दिखलाई देता ही नहीं। जिस प्रकार हिन्दू पौराणिक शास्त्र में गरुड़ का विष्णु महाराज का वाहन माना है इसी प्रकार यूनान के पौराणिक शास्त्र में गृद्ध को वृहस्पति महाराज (Jupiter) का वाहन माना है और जो गुरू महाराज के आसन के निकट खड़ा हुआ माना जाता है।

४. सैजीटेरीयस (Sagittarius)–यह समूह मास के मध्य में ९ बजे रात्रि को मध्याङ्क रेखा पर दिखाई देता है और १० बजे से पूर्व इसके देखने का उद्योग करना व्यर्थ होगा परन्तु जौलाई के अन्त में ६ बजे दीखता है। यह तारागण १० मुख्य तारों का समूह है। अन्तिम अगस्त में यह समूह ६ बजे रात को ठीक दक्षिण दिशा में मध्याङ्करेखा पर दिखाई देता है। जिस समय आकाश गंगा अर्थात् मिल्की-वे का दृश्य देखने में आता है।

५. सिफस् (Cephus)-इस समूह में उच्च श्रेणी वाले पांच तारे हैं।

६. कैप्रीकारनस् (Capricornus) मकर। यह समूह धन तारागण के पूर्व की ओर दिखाई देता है। इस समूह में १० मुख्य तारे हैं जिनमें से ६ उच्च श्रेणी वाले हैं। अर्द्ध-रात्रि से पूर्व यह समूह भली भांति नहीं दीख सकता, परन्तु अगस्त के अन्त में ९ बजे उपरान्त भली भांति दिखलाई देने लगता है और ११ बजे तक मध्याङ्क रेखा पर पहुँच जाता है।

प्रश्न-तारों के चार वर्णों में से सय्यारों अथवा घूमने वाले बड़े तारों और स्थिर तारों का वर्णन तो हो चुका। अब पुच्छल-तारों का वृत्तान्त संक्षेप में कर दीजिये।

उत्तर-अङ्गरेज़ी भाषा में इनको Commets कहते हैं। सय्यारों के मार्ग-चक्र अण्डाकार (Elliptic) पाये जाते हैं परन्तु पुच्छल-तारों के मार्ग तीन प्रकार के हैं। १ ऐलिप्टिक (Elliptic), २ पैरेबोलिक (Parabolic), ३ हाइपरबोलिक (Hyperbolic) होते हैं। विशेषकर पैरेबोलिक पाये जाते हैं। कोई २ ऐलिप्टिक मार्ग पर चलता है और हाइपरबोलिक मार्ग तो कोई बिरला ही पसन्द करता है। Elliptic मार्ग का मुंह बन्द होता है अर्थात् अण्डाकार घेरा होता है परन्तु पैरेबोलिक तथा हाइपरबोलिक (Parabolic & Hyperbolic) मार्ग के मुख खुले हुए होते हैं। और धीरे २ चौड़े होते जाते हैं।

यदि कोई ऐसा तारा आकाश में भ्रमण करने को निकल आता है तो सूर्य की आकर्षण शक्ति उसको सूर्य की ओर ले जाने का प्रयत्न करती है। यदि सूर्य और तारा दोनों स्थिर

होते तो आकर्षण-शक्ति द्वारा वह तारा सीधा सूर्य की ओर चल पड़ता परन्तु दोनों जंगम हैं इसलिये तारे का मार्ग (Parabolic)-बन जाता है और कुछ समय के लिये अपने मार्ग पर चलता हुआ ऐसा प्रतीत होता है मानो सय्यारों की तरह यह भी सूर्य के चारों ओर घूमा करेगा परन्तु ऐसा न करके अपना लम्बा रास्ता पकड़ लेता है और फिर भेंट ही नहीं होती। मानो किसी ऐसे देश को निकल जाता है जहां के जाने वाले फिर नहीं लौटते।

आकाश में चलते २ यदि किसी सय्यारे (Planet) के समीप होकर जाना पड़ता है तो उसके मार्ग में भेद पड़ जाता है अथवा उस स्थान पर उसका मार्ग ठीक पैरेबोलिक (Parabolic) नहीं रहता। उदाहरणार्थ यदि बृहस्पति ऐसे स्थान पर हो जहां से उसकी आकर्षण शक्ति पुच्छल तारे की गति को बढ़ा सके तो तारे का मार्ग हाइपरबोलिक (Hyperbolic) हो जाता है। यदि बृहस्पति की आकर्षण शक्ति तारे की गति को कम कर देती है तो उसका मार्ग ऐलिप्टिक (Elleptic) हो जाता है और बिचारे तारे को स्वतन्त्रता का मार्ग छोड़ कर सूर्य देवता का सेवक और अनुगामी बन कर उनके चारों ओर परिक्रमा करनी पड़ती है।

पुच्छल तारों के कोई २ समूह ऐसे भी होते हैं जिनके मार्ग एक से ही हों परन्तु काल-चक्र सब के भिन्न २ हों। इन तारों के जो समूह सन् १६६८, १८४३, १८८०, १८८२ और १८८७ में देखे गये हैं वह बहुधा इसी प्रकार के हैं। कारण यह है कि इन में से प्रत्येक सूर्य के समीप होकर गुज़रा और इसी कारण से सूर्य की उष्णता सहन करनी पड़ी और बहुत कुछ हानि भी पहुँची अथवा उनका विशेष भाग सूर्य की प्रचण्ड अग्नि में स्वाहा हो गया।

फ्रांस के एक प्रसिद्ध गणितकार का कथन है कि यदि कोई पुच्छल-तारा इस रीति से भिन्न भिन्न हो जाय तो उस का शेष भाग पहले मार्ग पर ही चला जायगा।

पुच्छल तारे अति चंचल और डावांडोल स्वभाव वाले होते हैं। केवल उनकी गति ही विचित्र नहीं होती उनके दर्शनों का भी कोई नियम नहीं है अथवा ऐसा निश्चय करना कि अमुक पुच्छल-तारा कब और कहां दिखाई देगा अति कठिन है। इनके स्वभाव की अपूर्वता का कारण इनकी शारीरिक विचित्रता है। पृथिवी या चांद की तरह यह ठोस नहीं होते किन्तु पृथक् २ अथवा ढीले बंधे हुए (आकर्षण शक्ति द्वारा) छोटे शरीरों के समूह होते हैं और एक साथ ऐसे दौड़ने लगते हैं मानों बन्दूक में से निकलकर सैंकड़ों छर्रे भागे जा रहे हैं। यह छोटे २ शरीर वाले तारे सूर्य की गर्मी से पिघल कर पानी २ हो जाते हैं। इनके शरीर की ठीक २ नाप तोल नहीं बतलाई जा सकती किन्तु अनुमान ऐसा किया जाता है कि राई के दाने से लेकर एक बड़े मकान की बराबर तक होते हैं। लम्बे बहुत होते हैं किन्तु बहुत छोटे और हल्के। प्रकृति ने इनके शरीर को किसी ऐसे सूक्ष्म द्रव्य से बनाया है कि यह किसी दूसरे के प्रकाश को रोक नहीं सकते। मानो बहुत हल्के बादल की तरह के होते हैं क्योंकि थोड़े से थोड़े प्रकाश वाले तारे जो इनसे परे होते हैं साफ़ २ दिखलाई देते हैं। अनुमान ऐसा होता है कि यदि बड़े से बड़े पुच्छल तारे के बनाने वाले तारों की संख्या १००००० भी हो तो सब मिल कर भी वज़न में पृथिवी की बराबर नहीं हो सकते।

जैसे २ पूंछड़िया तारा सूर्य के समीप आता जाता है सूर्य की बढ़ती हुई गर्मी और बिजली की शक्ति से वह

प्रकाशवान् और प्रज्वलित हो जाता है और तारे के शरीर का प्रधान भाग जो गाढ़े द्रव्य का होता है धुन्द सा नज़र आने लगता है और चारों ओर के हल्के भाग की अपेक्षा में गाढ़ा और अधिक चमकदार हो जाता है। तदुपरान्त धीरे धीरे पूंछ बननी शुरू हो जाती है जो सूर्य से अन्तर पर रहती है। प्रधान भाग में से सूर्य की ओर फव्वारे से छूटते दिखाई देते हैं जो वास्तव में जल के नहीं होते किन्तु भाप और धुंए (Vapour) के होते हैं। सूर्य की गर्मी से यह धुंआ उल्टा फिर कर पूंछ बन जाता है। जैसे ही यह तारा सूर्य से अति समीप का स्थान पैरीहीलियन् Perihilion) छोड़ कर कुछ फ़ासले पर हो जाता है तो सूर्य का प्रभाव पड़ना बन्द हो जाता है। प्रधान भाग मलीन और मन्द गति वाला बन जाता है और पूंछ सुकड़ते २ लोप हो जाती है। कुछ सप्ताह अथवा महीनों के बाद एक जगमगाता हुआ पीला और धुंधला तारों का गुच्छा रह जाता है और धीरे धीरे यह भी लोप हो जाता है।

इन चमकदार और प्रकाशमान तारों का जलूस अथवा कान्तिवान सङ्गी साथियों का समूह बड़े विस्तार वाला होता है। करोड़ों मील लम्बा तांता लगा हुआ दिखलाई देता है। कभी कभी यह जलूस सीधी पंक्ति में नज़र आता है किन्तु प्रायः ऐसे आकार वाला होता है मानो किसी विजयी शूरवीर योद्धा के शिर पर कलगी अथवा केशों का गुच्छा लहरा रहा है।

फव्वारों द्वारा जो पदार्थ सूर्य की ओर खिचकर जाता है कोई दूसरी शक्ति (Repulsive-force) जो सूर्य की आकर्षण-शक्ति के प्रतिकूल है उसके रास्ते में बाधा डाल कर

उसको वक्र-गति वाला बना देती है जिसके कारण वह प्रधान भाग के पीछे जाकर पूंछ बन जाता है और उसकी गति ठीक ऐसी ही होती है जैसी कि रेल के अञ्जन में से आगे की तरफ़ निकलने वाले धुंए की।

बिजली की शक्ति दो प्रकार की होती है। एक आकर्षण करने वाली (Attractive) और दूसरी उल्टा हटाने वाली (Repulsive)। जब ऐसा तारा सूर्य के निकट आता है तो सूर्य में यह दोनों शक्तियां काम करने लगती हैं। पहली के द्वारा तारे के प्रधान भाग को सूर्य अपनी ओर खींचता है और दूसरी के द्वारा उसके हल्के भाग को उल्टा फेंकता है।

द्रव्य सम्बन्धी विचार से पाया जाता है कि प्रधान भाग हाइड्रो-कारबन-गैस (Hydro-carbon-gass) का होता है और उसमें (Sodium, iron, magnesium & Calsium) भी पाये जाते हैं। जिस समय यह तत्त्व बिजली की शक्ति (Electrical Repulsion के सामने आते हैं तो अधिक हल्के तत्त्वों की गति अति वेग वाली हो जाती है और जो तत्त्व किसी कदर भारी हैं उनकी गति कम होती है और जो बहुत भारी हैं उनकी बहुत ही मन्द गति होती है। इन सब कारणों के मिलने से तारे (Commet) की पूंछ एक ओर को झुक जाती है। यह पूंछ तीन प्रकार की होती है। एक वह जो बिल्कुल सीधी होती है, इसमें (Hydrogen) तत्त्व का प्रधान भाग होता है। दूसरी वह जो झुकी हुई होती है। विशेष कर तारों की पूंछ दूसरे प्रकार की होती है जिसमें प्रधान भाग (Hydro-carbon) का होता है। तीसरी कलगी के आकार की होती है। ऐसी पूंछ बहुत कम देखने

में आई हैं। इन तीन प्रकार की पंछों की उपमा उस धुएं से दी जा सकती है जो एक धीरे धीरे चलने वाली मालगाड़ी के अञ्जन में से निकलता है। यदि भाप का दबाव (Steam Pressure) अधिक है तो यह धुंआ सीधा ऊपर को चला जायगा, यदि दबाव मध्यम है तो धुंआ टेढ़ा होकर जायेगा। यदि यह दबाव इतना कम है कि नाम-मात्र को ही है या अभाववत् है तो यह धुआं उस नलकी के चारों ओर पांव पीटता नज़र आयेगा जिसमें से कि वह निकलता है। किसी २ तारे की पूंछ एक से अधिक होती है और पूंछ के आकार में परिवर्तन भी होता रहता है।

सन् १८६२ ई० में ४ अप्रैल को जो पूंछड़िया तारा निकला था उसकी पूछ बिल्कुल सीधी थी और २० दर्जे लम्बी थी और दो जुदी २ पूंछ दिखाई देती थी। अगले रोज़ उनके बीच में एक तीसरी दिखाई देने लगी। फिर अगले दिन एक जाती रही और शेष दोनों मिल कर एक हो गईं। इस से अगले दिन एक अधिक चमकने वाली बन गई और उसके ६ भाग पृथक् २ दिखाई देने लगे।

अण्डाकार (Elliptic) मार्ग पर चलने वाला तारा जिसके लौटने का समय नियत हो सकता है कालचक्र वाला तारा कहलाता है (Periodic Commet) ज्यूं ही ऐसा तारा सूर्य के अति समीप हो जाता है उसका बहुत सा द्रव्य पदार्थ नष्ट हो जाता है और कुछ समय उपरान्त ऐसे तारे की इतिश्री हो जाती है।

वर्त्तमान ज्योतिष सम्बन्धी शिक्षा फैलने से पूर्व पुछड़िया तारे का दृश्य अन्धविश्वासियों के लिये भयजनक होता था

और मिथ्याभाषी अनेक प्रकार की कल्पनायें और भविष्य-वाणी कहा करते थे और जिन देशों में इस शिक्षा का प्रकाश भली भांति नहीं हुआ है वहां अब भी यही दशा पाई जातीहै। इन मिथ्या कल्पना करने वालों और भयभीत होने वालों में केवल वही लोग नहीं है जो मूढ़, अज्ञानी, अशिक्षित और असभ्य कहलाते हैं। किन्तु ऐसे जन भी शामिल हैं जिनको पण्डित, ज्ञानी और सभ्यता के ठेकेदार कहलाने का सौभाग्य प्राप्त है और शिक्षित होने का अभिमान है और जिनकी गणना विद्वानों में होती है परन्तु जिनका ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान शून्य है और निरक्षर भट्टाचार्य कहलाने योग्य हैं।

सन् १५२८ ई० में जो पूछड़िया तारा निकला था ऐसा भयानक और शोक-जनक कहा जाता है कि उसको देखकर साधारण मनुष्य इतने भयभीत हुए कि बहुतसों का तो प्राणान्त तक हो गया और रोगी तो असंख्य पड़ गये। यह तारा बहुत लम्बा और रक्त-वर्ण का था। इस का आकार ऐसा प्रतीत होता था कि मानो कोई अमानवी व्यक्ति या राक्षस अपने एक हाथ में तलवार इस प्रकार पकड़े हुये है कि किसी पर प्रहार करने वाला है। मिथ्या भावना करने वालों के लिये इसके दोनों ओर अगणित छुरे, कुल्हाड़े और लाल २ चमकती हुई तलवारें नज़र आती थीं और इन के समीप ही मनुष्यों के भयानक दशा वाले शीश दिखाई देते थे जिन की डाढ़ी और शिर के बाल चमकते हुए नज़र आते थे।

ऐसे तारों के देखने से यदि कोई सच्चा भय हो सकता है तो वह यह कि कहीं यह तारा पृथिवी से टकरा जाय तो हमारी क्या दशा होगी—इस बात का डर या भय हो सकता है कि टक्कर खाने से जो गर्मी और अग्नि उत्पन्न होगी वह

पृथिवी के ऊपरी भाग (Surface) का ऐसा झुलसा देगी मानो किसी ने हमारी पृथिवी को एक भारी दहकती हुई भट्टी में झोंक दिया है और उस पर बसने वालों की दशा का अनुमान सुगमतासे किया जासकता है। परन्तु इन तारों की बनावट और उत्पत्ति के विषय में जो ऊपर लिखा जा चुका है उस से प्रत्यक्ष प्रकट होता है कि किसी ऐसे भय और डर का मानना वृथा है। यदि कोई साधारण तारा (Commet) पृथिवी की ओर लपक कर आवे तो वर्त्तमाम ज्योतिष के जानने वाले और वैज्ञानिक के लिये शोक के स्थान पर हर्ष और आनन्द का समय होगा क्योंकि जिस प्रकार फुलझड़ी या आकाश में जाकर फटनेवाले आतिशबाज़ी के गोले में से किसी प्रकार भी हानि न पहुँचने वाले फूल झड़ते हैं इसी प्रकार टक्कर खानेपर अति सुन्दर और आनन्द-दायक दशा का दृश्य प्राप्त होगा। किसी बड़े भारी पुछड़िया तारे के टकराने से अवश्य शोक और भय की सम्भावना हो सकती है क्योंकि ऐसे तारे में धातुज पदार्थ भी होते हैं। वह केवल वायु (Gass) के ही नहीं होते और पृथिवी के चारों ओर वाली वायु इतनी शक्ति नहीं रखती जो इन धातुओं को पिघला कर जल या वायु बना दे परन्तु सौभाग्य से यह पदार्थ पास पास नहीं होते। इतने अन्तर पर होते हैं कि बड़े से बड़े शहर में दो एक ही गिर सकते हैं। यदि इस बात पर विचार किया जाय कि पृथिवी के पास आने से पहले इन धातु-कणों को असंख्य मीलों का अन्तर तै करना पड़ता है तो शोक और चिन्ता का कोई स्थान ही नहीं रहता क्योंकि इतने लम्बे मार्ग में इनके स्वयं ही नष्ट भ्रष्ट हो जाने की सम्भवना है।

अठारवीं और उन्नीसवीं शताब्दि के मुख्य २ पूंछड़िया तारों (Commets) का संक्षिप्त वर्णन।

१. सन् १७७० ई० में जो पूछड़िया तारा पहले २ दिखाई दिया था उसने ज्योतिषियों को ऐसा तरसाया कि उनकी नाक में दम कर दिया क्योंकि उसका मार्ग चक्र अण्डाकार पाया गया और एक चक्र का समय ५½ वर्ष निकला परन्तु सन् १७७६ ई० में नज़र न आया। इस साल तो ज्योतिषियों ने अपना मन इस तरह बहला लिया कि सूर्य और तारे के सम्बन्ध में पृथिवी ऐसे स्थान पर नहीं थी कि यह तारा सुगमता से दीख सकता किन्तु सन् १७८१ ई० में भी जब कि पृथिवी बाधा डालने वाले स्थान पर नहीं थी यह तारा दिखाई नहीं दिया। अब तो ज्योतिषियों के कान खड़े हो गये। आकाश की ओर दूर्बीनें तन गईं और जांच पड़ताल शुरू हो गई। अन्त में यह निश्चय हुआ कि इस बाधा का कारण बृहस्पति महाराज (Jupiter) थे क्योंकि सन् १७७९ में वह तारा गुरु महाराज के अति समीप आ गया था और उनकी परिक्रमा करने वाले चन्द्रमाओं में उलझ कर चक्कर में फंस गया और ऐसी दुर्दशा हुई कि फिर पता ही न चला।

२. सन् १७८६ वाला तारा अपने मार्ग-चक्र पर सूर्य के चारों ओर ३¼ वर्ष में घूम गया। इस से कम समय में घूमने वाला तारा आज तक नहीं देखा गया। इसका शरीर बहुत छोटा था और मार्ग में मिलने वाले तारों ने उसकी चाल बहुत कम कर दी।

शक्ति-शास्त्र का नियम है कि जिसकी चाल मध्यम पड़ जाती है उसको पीछे हटाने वाली शक्ति (Centrifugal

force) भी कम हो जाती है। वह सूर्य के नज़दीक होता जाता है और उसका मार्ग चक्र छोटा पड़ता जाता है और एक दिन सूर्य की प्रचण्ड अग्नि में स्वाहा हो जाता है।

३. सन् १८२६ वाले तारे का काल चक्र भी छोटा था जो ३¾ वर्ष में पूरा हो गया था परन्तु १८३२ ई० में उसके दृश्य ने बड़ा भय पैदा कर दिया। ऐसा विश्वास हो गया कि यह पृथिवी के मार्गचक्र पर होकर गुज़रेगा और लोगों ने अनुमान कर लिया कि पृथिवी से टकराने की बहुत कुछ सम्भावना है। परन्तु जिस समय यह तारा पृथिवी के मार्ग चक्र पर हो कर गुज़रा उस समय पृथिवी उस से लाखों मील के अन्तर पर थी। १३ वर्ष बाद इसके दो जोड़िया टुकड़े नज़र आने लगे और थोड़े ही दिनों में बिल्कुल अलग २ हो गये और जब इन टुकड़ों में १५०००० मील का अन्तर हो गया तो उसकी पूंछ भी अलग २ दिखाई देने लगी। सन् १८५२ ई० में यह टुकड़े फिर देखने में आये परन्तु इस समय इन में अन्तर लगभग १० गुणा हो चुका था। २७ नवम्बर सन् १८७२ ई० को जिस समय पृथिवी के मार्गचक्र पर हो कर यह तारा गुज़रा तो टूटते हुये तारों की एक झड़ी नज़र आयी और सन् १८८५ में दूसरी झड़ी दिखाई पड़ी। इसके बाद सन् १८९२ में। परन्तु इस के उपरान्त अब तक नज़र नहीं आई।

४. सन् १८८२ ई० के सितम्बर में जो तारा दिखाई दिया था वह अति प्रकाशवाला और बड़ा भारी था और इतना चमकदार कि दिन में साफ़ दिखाई देता था। १७ सितम्बर को सूर्य के पास से होकर गुज़रा परन्तु उसकी गति में भेद नहीं प्रतीत हुआ। इतना अवश्य हुआ कि सूर्य

की गरमी और उसकी आकर्षण-शक्ति ने उस के प्रधान भाग के आकार को अवश्य बिगाड़ दिया। उस की पूंछ जिसका विस्तार १० करोड़ मील के लगभग था एक सुनहरी सलाख़ की तरह आकाश में चमकती थी। दो मास तक उस के सिर के आगे एक म्यान के आकार वाला प्रकाश दिखाई देता रहा। मानो यह तारा तलवार है और उस म्यान में समा जायगा। जब तक इस तारे का अन्तर सूर्य से ५० करोड़ मील का नहीं हो गया बराबर दिखाई देता रहा और इसका मार्गचक्र एक लम्बोतरा अण्डाकार बन गया था। इसकी गति पर विचार करने से ऐसा अनुमान होता है कि २७ वीं शताब्दि के मध्य में यह तारा फिर दिखाई देगा।

५. सन् १८६९ के नवम्बर में निकलने वाले पूंछडिया तारे के देखने से भारी भय उत्पन्न हुआ था क्योंकि ऐसा प्रतीत होता था कि पृथिवी से टकरा जाएगा किसी २ स्थान से तो कई रात बराबर दीखता रहा और इसके छुप जाने के बाद भी लोगों के दिलों में भय बना रहा, अनेक प्रकार की कल्पनायें होती थीं। मन मानी घड़ंत की जाती थीं। अन्ध-विश्वासियों का तो कहना ही क्या ? जैसा किसी ने कह दिया उसी को सत्य मान लेते।

इषु-द्रु-नक्षत्र

(Meteors or Shooting Stars)

तीर की तरह निकल कर भागने वाले यह वह चौथे वर्ण वाले तारे हैं जो प्रायः रात्रि के समय टूटते हुवे दिखाई देते हैं। इनको सूर्य-मण्डल का चौथा वर्ण भी कह सकते हैं। क्योंकि आकाश के जिस भाग में सूर्यमण्डल घूम रहा है

उसी भाग में असंख्य सूक्ष्म–शरीर–धारी तारे भी पाये जाते हैं। इन में से जो हमारे समीप हैं वह सूर्य के चारों ओर घूम रहे हैं और सूर्य का अधिकार और अनुशासन ऐसा ही है जैसा सय्यारों (Planets) पर। सय्यारों की तरह यह भी निरन्तर नियम का पालन करते हुवे आकर्षणशक्ति की जञ्ज़ीरों (Gravitational-force) में जकड़े हुवे अपने २ मार्ग-चक्र पर पाये जाते हैं। ज्यूं ही इन में से कोई पृथ्वी के वायु गोले (Atmosphere) से टकरा जाता है तो Meteor or Shooting Star का जन्म होता है। जैसे ही यह सूक्ष्म-शरीर-धारी पृथ्वी के वायु गोले के बाहिरी भाग में दाख़िल होता है जलने लग जाता है और चमक उठता है।

प्रश्न—ज्योतिषियों ने आकाश निवासियों के वर्ण तथा उनकी उत्पत्ति ही जब मालूम करली तो उत्पत्ति का रीति भी तो मालूम की होगी ?

उत्तर–वर्तमान ज्योतिष (Modern Astronomy) सूर्य-मण्डल की उत्पत्ति का इस प्रकार वर्णन करता है कि धुन्ध समूह (Nebula) के परमाणुओं में परस्पर आकर्षण-शक्ति के कारण वह समूह गोलाकार हो जाता है। चक्र की तरह घूमने लगता है और गर्म हो जाता है। और घूमने से जितना सुकड़ता जाता है उतना ही उसका वेग बढ़ता जाता है उसके धुरे (Poles) चपटे हो जाते हैं और 'भू-मध्य-रेखा' (Equator पर उभर जाता है। अति वेग होने पर 'वाह्य आकर्षण शक्ति' (Centrifugal Force) इतनी न्यून हो जाती है कि 'आन्तरिक-आकर्षण-शक्ति' (Central Attraction) भू-मध्य-रेखा के पदार्थ को रोक नहीं सकती। और रेखा पर का पदार्थ छल्ले के आकार में अलग हो जाता है।

यदि मध्य रेखा के किसी स्थान पर यह पदार्थ अन्य स्थानों की अपेक्षा गाढ़ा अथवा मोटा होता है तो वह डला बन जाता है और छल्ले की तरह यह डला अलग हो जाता है।

चूंकि धुन्ध-समूह का मुख्य भाग उसी वेग से घूमता रहता है फिर कोई दूसरा छल्ला या डला समय पाकर अलग हो जाता है यदि इस अलग होने वाले छल्ले का कोई भाग शेष-भाग की अपेक्षा अधिक गाढ़ा होगा तो आस पास के पदार्थ को अपनी ओर खेंच लेगा और अन्तमें स्वयं एक दूसरा घूमने वाला पिण्ड या शरीर बन जायगा जिसको ग्रह कहतेहैं। यह ग्रह भी अपनी बारी पर अपने देह से घूमतेहुए छल्लाकार या पिण्डरूपी पदार्थ पीछे छोड़ता चला जायगा और यह भाग समय पाकर उप-ग्रह (Satellite) बन जायगा। और जिस प्रकार इसका जन्मदाता अर्थात् ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमने लगा था उसी प्रकार यह शरीर भी अपने जन्म दाता के चारों ओर घूमने लगेगा जैसे चन्द्रमा पृथिवी का उप-ग्रह बन कर उस के चारों ओर घूमता है।

यदि वह छल्लाकार पदार्थ एक सा गाढ़ा हो तो या तो उसमें बहुत से छोटे २ पिण्ड (Asteroids) उत्पन्न हो जायेंगे या ऐसे छल्ले बन जायेंगे जैसे शनि के चारों ओर घूमते हुए दिखाई देते हैं।

सूर्य से अलग होने वाला भाग यदि पिण्डाकार है तो ग्रह *अति शीघ्र बन जाता है।*

यह 'ग्रह' और 'उप-ग्रह' शनैः २ जलरूपी होते जाते हैं और अन्त में ठोस बन जाते हैं और उनकी गर्मी बहुत कम हो जाती है मंगल जैसे छोटे ग्रह के उपग्रह बहुत जल्द ठण्डे हो जाते हैं और अनुमान कहता है कि वह ठोस हो चुके हैं।

बड़े शरीर पर छिलका या पपड़ी जम जाती है और उनकी आन्तरिक उष्णता बहुत काल तक बनी रहती है जैसे कि पृथिवी की दशा है। इस से भी बड़े बृहस्पति और शनि जैसे ग्रहों के सम्बन्ध में ऐसा अनुमान किया जाता है कि अभी तक वह इतने ठण्डे नहीं हुए कि उनके शरीर पर छिलका या पपड़ी जम सके। असली धुन्ध-समूह के प्रधान-भाग से सूर्य बना परन्तु इस प्रधान भाग का पदार्थ अभी तक अग्नि-रूप है जब तक यह पदार्थ जल-रूपी नहीं होता सूर्य की उष्णता कम नहीं हो सकती।

प्रश्न—क्या यह 'धुन्ध-समूह-अनुमान' (Nebular-hypothesis) मान्य और अटल कहला सकता है ?

उत्तर—इस प्रश्न का उत्तर कोई ज्योतिष शास्त्र वेत्ता यही देगा कि इस समय तक जो खोज और जांच पड़ताल हुई है वह तो इसी नियम को मान्य तथा अटल बतलाती है। भविष्य की ईश्वर जाने। इस समय इस के मिथ्या होने की कोई सम्भावना नहीं हो सकती परन्तु उस अपार की लीला और माया भी अपार है। सम्भव है कि कोई समय ऐसा भी आए कि यह नियम अटल न रहे क्योंकि पृथिवी को स्थिर मान-कर सूर्य को चारों ओर घुमानेवाले 'टालमी-अनुमान' (Ptolomy-Hypothesis) ने १४ वर्ष तक राज्य किया परन्तु सोलहवीं शताब्दी के 'कोपरनीकस' (Copernicus) के अनुभव ने सूर्य को स्थिर मान कर सब ग्रहों को उसके चारों ओर घुमा दिया।

प्रश्न—जब 'गणित-ज्योतिष' सम्बन्धी ऐसे मत-भेद हैं तो फलित ज्योतिष सम्बन्धी भी अवश्य होंगे ?

उत्तर—फलित ज्योतिष सम्बन्धी भिन्न २ देशों में ही भिन्न भिन्न मत नहीं किन्तु एक एक देश में ही नाना प्रकार के मत पाये जाते हैं। सब से बड़ा मत-भेद तो यह है कि किसी २

को इसके सच्चा मानने में शंका और संकोच है। वैज्ञानिक लोक तो केवल गणित-ज्योतिष-शास्त्र मानते हैं और फलित-ज्योतिष को शास्त्र कहना ही अनुचित समझते हैं।

प्रश्न—वैज्ञानिक लोक इस बात का कोई प्रमाण भी देते हैं कि 'फलित-ज्योतिष' शास्त्र क्यों नहीं कहला सकता है?

उत्तर—इस प्रश्न के उत्तर के लिये बहुत समय की आवश्यकता है कि क्योंकि वह उत्तर साधारण तथा संक्षिप्त नहीं होगा बल्कि लम्बा चौड़ा होगा। अतः इस पर पुनः अवकाश मिलने पर प्रकाश डाला जावेगा।

